thearyasamaj.org

स्थापना वर्ष:१९४२

नूतन निष्काम पत्रिका

❑ वर्ष-5 ❑ अंक-12
❑ मुम्बई ❑ दिसम्बर-2014
❑ मूल्य-रु.9/-

॥अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंद॥

thearyasamaj.org

वर्तमान में आर्य समाज की प्रासंगिकता

– विजय कुमार जायसवाल

मेरे एक समझदार मित्र ने कहा, महर्षि दयानन्द ने वैदिक सिद्धान्तों के प्रतिपादन के लिए तथा समाज में फैली कुरीतियों को दूर करने के लिए, देश की स्वतंत्रता के लिए, मूर्ति पूजा का खण्डन करते हुए पाखण्ड खण्डिनी पताका फहरायी थी। इसी आन्दोलन को आगे बढाने के लिए उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की। अब जबकि शिक्षित व्यक्तियों की संख्या गुणात्मक रूप से बढी है, तकनीकी ज्ञान में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है, लोगों की समझदारी बढी है तो ऐसे समाज में अब आर्य समाज की क्या आवश्यकता है ?

थोडी देर के लिए मै सोच में पड गया कि क्या उत्तर दूँ? फिर मैंने कहा कि आर्य समाज की आवश्यकता पहले से कहीं ज्यादा आज है । आज फिर जरुरत है पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराने की, क्योंकि सामाजिक कुरीतियां बढ रही हैं। पूजा-पाठ में पाखण्ड बढ रहा है । धर्म के नाम पर आडम्बर का बोलबोला है। निहित स्वार्थवश नये नये देवी देवता पैदा हो रहे है। दूसरे धर्म व सम्प्रदाय के लोग अब भगवान बनने लगे हैं। क्योंकि उन्हे लगता है कि हिन्दू धर्म ही ऐसा धर्म है जहां आसानी से भगवान बन कर या भगवान बनाकर लोगों को ठगा जा सकता है । यही कारण है कि साई (चांद मिया) नामक मुस्लिम फकीर को भगवान का दर्जा दे दिया गया । धर्मान्ध हिन्दू उनकी पूजा अर्चना कर रहे है। इनके अतिरिक्त छोटे-बडे पैमाने पर अनगिनत देवी देवता पैदा हो गये हैं और हो भी रहे है। कोई जय गुरुदेव है तो कोई ....राधे मां है तो ...कितने ही और जाने अनजाने नाम है।

सामाजिक कुरीतियों में जातिवाद बढा है। तरह तरह की अन्य परम्पराएं बढी है जिसे किसी भी प्रकार से मानवीय नही कहा जा सकता है जैसे बच्चे को उपर से नीचे को फेंकना, बच्चे को पानी में डुबाना, एक दूसरे पर पत्थर मारना, पशु बलि देना आदि आदि। आवश्यकता है इन कुरीतियों के विरुद्ध आवाज बुलन्द करने की। यह काम कौन करेगा? कोई और नहीं करेगा, आर्यसमाज को ही करना होगा। सुनियोजित ढंग से रूप रेखा तथा कार्य योजना बनाना होगा और उन्हे कार्यान्वित करना होगा।

मांसाहार का प्रचलन बढा है। सडकों पर जगह जगह बूचडखाने खुल गये है। सरे आम निरीह जानवरों की हत्याएं हो रही है। पहले यह सीमित रूप से छिपा कर बन्द कमरों में होता था। अब यह काम खुले आम सार्वजनिक ही हो गया है। छोटे बडे सभी जानवर काटे जा रहे हैं। आवश्यकता है इसके विरुद्ध आवाज उठाने की।

गौ रक्षा आन्दोलन शिथिल पड गया है । गाये अब पहले से कहीं ज्यादा कट रही है। अगर आपको याद हो तो गौ रक्षा का बिगुल सब से पहले स्वामी दयानन्द जी ने ही बजाया था। अब सरकारी बूचडखानों की संख्या बढ रही है। प्राइवेट बूचडखाने तो अनगिनित है। और आश्चर्य की बात यह है कि यह सब सरकार की जानकारी और निगरानी में हो रहा है। हमें सरकार पर दबाव डालकर इन बूचडखानों को बन्द कराना होगा।

मांसाहार से होने वाली हानियों का प्रसार आवश्यक है ताकि लोगों की इसके प्रति अरुचि पैदा हो।

साई बाबा के प्रचार-प्रसार ने तो बवाल मचा दिया है । अन्य सारे पौराणिक देवी देवता गौण हो गये है। हम यहां पौराणिकों का समर्थन नहीं कर रहे है। वेद मान्य देवी देवताओं को भूल कर लोग साँई नामक फकीर को ही भगवान मान बैठे है । इनके प्रचार प्रसार में विधर्मियों का बहुत बडा हाथ है। अभी जल्दी ही स्वामी स्वरुपानन्द जी ने साई पूजा के विरुद्ध मुहिम छेडा तो हिन्दू धर्म के लोग ही उनके विरुद्ध हो गये। मेरी व्यक्तिगत राय है कि इस मुद्दे पर आर्यसमाजी को उनका समर्थन करना चाहिए था । हमारा काम थोडा आसान हो जाता। यह सही अवसर भी था और समय की मांग भी। आवश्यकता है लोगों को जानकारी देने की कि मज़ार की पूजा मत करो। साई मंदिर (शिरडी) कुछ और नहीं मजार ही है।

यह सब काम अब नहीं तो कब होगा? आर्य समाज नहीं करेगा तो कौन करेगा? स्वामी दयानन्द जी ने आर्यसमाज की स्थापना इन्ही सब कार्यो के लिए की थी। लेकिन, ऐसा लगता है कि आर्य समाज के लिए यह कार्य गौण हो गया है। आवश्यकता है आर्य समाज को पुर्नजागृत करने की । जगह जगह सभाएं करके, पत्र पत्रिका ओ में लेख के माध्यम से, टीवी पर अपनी उपस्थिति दर्ज कर सूची बद्ध एवं समय बद्ध हो कर, कार्य योजक बना कर उसे अमली जामा पहनाया जाना चाहिए। यह आवाज सरकार के कान भी पहुंचना चाहिए । माध्यम चाहे जो भी हो।

सार्वदेशिक एवं प्रादेशिक आर्य संस्थाओ को अपने निहित स्वार्थ को छोडकर आर्य समाज की तरफ से देश व समाज में सशक्त आन्दोलन छेडने की आवश्यकता है । अगर ऐसा नहीं हुआ तो एक दिन ऐसा आयेगा जब आर्य समाज इतिहास के पन्नों में सिमट जाएगा और देश व धर्म भी खतरे में पड़ जाएगा।

आर्य विद्वानों से अनुरोध

प्रतिवर्ष ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर टंकारा समाचार का ऋषि बोधांक प्रकाशित किया जाता है। आगामी बोधोत्सव १६, १७, १८ फरवरी २०१५ को समारोह पूर्वक आयोजित किया जा रहा है और इसी अवसर पर 'टंकारा समाचार' का ऋषि बोधांक प्रकाशित होगा।

आपसे प्रार्थना हे कि आप अपने सारगर्भित अप्रकाशित लेख एवं कविता ३० डिसम्बर २०१४ तक भिजवाकर कृतार्थ करें। लेख वेद, स्वामी दयानन्द, योग स्वास्थ्य आदि एवं जन उपयोगी प्रेरणादायक विषयों पर ही सीमित हों, ऐसा निर्णय किया है । यदि प्रकाशन सामग्री टाईप की हुई हो तो सुविधाजनक रहेगा । इसके लिये मैं आपका अत्यन्त आभारी रहूंगा।

अजय सहगल, सम्पादक, टंकारा समाचार,

ए-४१९, डिफेन्स कालोनी, नई दिल्ली - ११००२४ चलभाष नं.- ०९८१००३५६५८.

thearyasamaj.org

आर्य समाज सांताक्रुज़, मुम्बई का मासिक मुखपत्र
वर्ष : ५ अंक १२ (दिसम्बर-२०१४)

- दयानंदाब्द : १९१, विक्रम सम्वत् : २०७१
- सृष्टि सम्वत् : १,९६,०८,५३,११५

प्रबन्ध संपादक : चन्द्रगुप्त आर्य
संपादक : संगीत आर्य
सह संपादक : संदीप आर्य
कार्यकारी संपादक : विनोद कुमार शास्त्री
लालचन्द आर्य, रमेश सिंह आर्य,
यशबाला गुप्ता.

विज्ञापन की दरें : शुल्क

- पूरा पृष्ठ : रु. ३,०००/-
- एक प्रति : रु. ९/-
- १/२ पृष्ठ : रु. २,०००/-
- वार्षिक : रु. १००/-
- १/४ पृष्ठ : रु. १,५००/-
- आजीवन : रु. १०००/-
- विशेषांक की दरें भिन्न होंगी।

वर्गीकृत विज्ञापन
रु. १०/- प्रति शब्द, न्यूनतम रु. ५००/-
चैक /डीडी / मनी आर्डर आदि 'आर्य समाज सान्ताक्रुज' के नाम से ही भेजें, मुंबई के बाहर के चैक न भेजे। विज्ञापन सामग्री १० तारीख तक भेजें। 'नूतन निष्काम पत्रिका' का मुद्रण ऑफसेट विधि से होता है।

पता : आर्य समाज सांताक्रुज़
(विट्ठलभाई पटेल मार्ग) लिंकिंग रोड, सांताक्रुज़ (प.),
मुंबई -५४. फोन : २६६० २८००, २६६० २०७५

अनुक्रमणिका	पृष्ठ सं.
वर्तमान में आर्य समाज की प्रासंगिकता ...	२
सम्पादकीय	३
धर्म प्रचार की लगन	४
गुरुकुल का आदर्श	५-७
विचार शक्ति का चमत्कार	८
जरुरी नहीं कि हम जितना गुड	८
लार्ड मैकाले का गहन षडयन्त्र	९
''ध्यान द्वारा तनाव-मुक्ति''	१०
''वैदिक दर्शन प्रतिष्ठान मुम्बई	१०
ज्योति हमसे कभी दूर न हो	११
कर्त्तव्य - अकर्त्तव्य	१२
अनुशासन का मंत्र ब्रह्मचर्य	१३
आर्य वीरांगना चरित्र निर्माण	१४
सूर्य नमस्कार	१५
''बोध - प्रतिबोध''	१६

सम्पादकीय

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

23 दिसम्बर 1926 के दिन दिल्ली में एक मतान्ध मुसलमान द्वारा स्वामी श्रद्धानन्द जी की हत्या कर दी गयी थी। आगरा में रहने वाले लगभग 5 लाख मलकाना राजपूतों को स्वामी जी ने पुन: वैदिक धर्म में प्रवेश कराया था। इसी से क्षुब्ध होकर एक मतान्ध ने स्वामी जी की हत्या की थी।

स्वामी श्रद्धानन्द का जीवन हम सबके लिये प्रेरणादायी है। महर्षि दयानन्द के व्याख्यानों से प्रभावित होकर आप आर्य समाजी बने। अपनी बेटी को ईसाई स्कूल में पढ़ाने भेजकर जब एक दिन ईसा पर ही कविता बोलते सुना तो वे स्तब्ध रह गये। आर्यों एवं हिन्दू घरों की कन्याओं के लिये उन्होंने कन्या पाठशाला की स्थापना की।

उन दिनों पंजाब में महर्षि दयानन्द की स्मृति में D.A.V. College की स्थापना की गयी थी। किन्तु इससे वैदिक पद्धति से संस्कृत-शिक्षण नहीं हो पा रहा था। वे वेद प्रचार के कार्य पर ध्यान देने लगे। उन्होंने महर्षि दयानन्द द्वारा बताये गये गुरूकुलीय शिक्षा पद्धति को पुनर्स्थापित किया जिससे आश्रम पद्धति और गुरू-शिष्य पद्धति का पुन: प्रचार हो सके। उन्होंने हरिद्वार के निकट कांगड़ी ग्राम में मुन्शी अमरसिंह जी की दान में प्राप्त जमीन से 26 गुरू-शिष्यों के साथ इस बीहड़ जंगल में गुरूकुल की स्थापना की। अपने दोनों पुत्रों हरिश्चन्द्र व इन्द्र को सर्वप्रथम प्रवेश दिलाया। उपदेश देने से ज्यादा वे स्वयं उदाहरण देकर कार्य को करते थे। स्वामी जी ने अपना सर्वस्व आहुत करके इस गुरूकुल को राष्ट्रीय स्तर तक पहुंचाया। यह गुरूकुल आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन था। पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के वे कई वर्षों तक प्रधान रहे। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पद को भी आपने सुशोभित किया। महात्मा गांधी से संपर्क में आकर आप कांग्रेस में शामिल हुए। देश की आजादी के आन्दोलन में आपने सक्रिय भाग लिया। उस वक्त के लगभग सभी आन्दोलनों में स्वामी जी सक्रिय रहे। हिन्दू शुद्धि सभा की भी उन्होंने स्थापना की।

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के अभूतपूर्व सर्वस्व बलिदान की बदौलत आर्य समाज की शक्ति बढ़ती गयी। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना जीवन महर्षि दयानन्द के कार्यों को विशेष पर वेद प्रचार के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिये समर्पित किया। आज जब हम उन्हें अपनी श्रद्धान्जलि दे रहें हैं तो अपने अन्दर झांककर देखना होगा कि क्या आज आर्य समाज उनके त्याग से कुछ सीखकर वैदिक धर्म का प्रचार कर पा रहा है या सिर्फ इन महान विभूतियों द्वारा विरासत मे दी गयी संमत्ति के विवादों में, आपसी विवादों में, आर्य समाज का मुखौटा ओढ़कर अपनी ऐषणावों की पूर्ति में ही शक्ति, समय गंवा रहा हैं।

- संगीत आर्य - 9323 573 892

thearyasamaj.org

धर्म प्रचार की लगन

स्वामी श्रद्धानन्द

१३ माघ (२६ जनवरी) को जालन्दर आर्यसमाज के अन्य सभासदों सहित मैं अलावलपुर चल दिया। ३ बजे जब अलावलपुर पहुँचे, लोग प्रतीक्षा में बैठे थे, ३ बजे आर्यसमाज के नियमों पर व्याख्यान आरम्भ हो गया। १ घण्टे तक मैंने आर्यसमाज का उद्देश्य समझाया, जिसके पश्चात् शंका-समाधान के लिए समय दिया गया। बहुत से प्रश्न हुए जिनका प्रेमपूर्वक उत्तर देकर उसी शाम ७ बजे जालन्धर लौट आया।

इसके तीसरे दिन १५ माघ (२८ जनवरी) की डायरी में लिखा है- ''गौरीशंकर आज आया, जिससे बातचीत करने पर पता लगा कि लसाडा ग्राम में हमारे काम के लिए बडा मैदान है। बहुत से प्रतिष्ठित ग्रामनिवासी हमारे सिद्धान्तों के साथ सहानुभूति रखते हैं। गृहस्थ मुझे अपने अन्तरात्मा की आवाज सुनने से रोकता है, नहीं तो बहुत काम हो सकता है। फिर भी कुछ कर सकता हूँ उसके लिए परमात्मा को धन्यवाद है''।

इन दिनों अहर्निश वैदिक धर्म को फैलाने की ही धुन लगी रहती। १६ माघ (२९ जनवरी) को दिन रात वर्षा होती रही। कचहरी के काम के अतिरिक्त शेष समय मैंने नये ब्रह्मचारी मुनिऋषि को दिया। उसे ब्रह्मचर्य के नियम समझाकर उससे प्रतिज्ञा ली कि वह विवाह के समय तक बराबर इन नियमों के अनुकूल चलता रहेगा। इस ब्रह्मचारी ने जैन धर्मसम्बन्धी अपनी सब पुस्तकें आर्यसमाज जालन्धर को भेट कर दी थी और जब आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की रजिस्ट्रि होकर लाहौर में वैदिक पुस्तकालय खोला गया तोउस समय वे सब हस्तलिखित पुस्तकें उस पुस्तकालय में रख दी गईं। मुझे ज्ञान नहीं कि अब उन स्मरणीय पुस्तकों की दशा क्या है?

ब्रह्मचारी से निबट कर मैंने कई भद्रपुरुषों को संन्यास की विधि समझाई। इस प्रकार का समय विभाग नित्य ही रहता था। १७ माघ (३० जनवरी० को प्रात:काल ही अजमेर से पत्र मिला जिसमें लिखा था कि पौराणिकों ने जालन्धर शहर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के विषय में बहुत कुछ असत्य अपवाद फैलाया है। मैं उसी समय लाहौर की 'आर्य पत्रिका' के लिए उत्सव का हाल लिखने बैठ गया। फिर कचहरी में जो भी समय खाली मिलता रहा उसमें यही काम जारी रहा और मुझे चैन न आया। जब तक कि उस लेख को समाप्त करके चार बजे डाक में न डाल दिया।

१६ माघ संवत् १९४५ (१ फरवरी १८८९) के दिन जालन्धर में गप्प उडी कि सनातन धर्म महामण्डल का लहौर में बडा विजय हुआ है। आर्यसमाज के व्याख्यान बन्द कर दिये गये है। जब अपने सभासदों के लाये हुए इस समाचार पर मुझे विश्वास न आया तो दूसरे दिन वे एक जालन्धर के अनपढ ब्राह्मण को ले आए जिसने आँखों देखी साक्षी इस प्रकार दी-

'कमिशनर साहब ने आर्यो ते सनातनी पण्डिताँ नूं बुलाके शास्त्रार्थ कराया ई। खलकत बेशुमार सी। में वी सब कुछ देखता ते सुणदाँ सी। दुहाँ पासियाँ दी गल्लाँ सुण के कमिश्नर साहब ने आख्या कि आर्यसमाज मंजूर नहीं, हमान्नूँ सनातन धर्म मंजूर सी'। इस बेतुकी हाँक को सुनकर मुझे तो हँसी छूटी किन्तु हमारे सभासद मेरे पीछे ही लगे रहे। तब उसी रात को रेल में मैं लाहोर चला गया। वहाँ का हाल मेरी २१ माघ (३ फरवरी) की वृत्तान्त पंजिका में इस प्रकार लिखा है -

''साढे सात बजे समाज मन्दिर पहुँचा। वहाँ चिरंजीव भी था। वहाँ पता लगा कि जो किंवदन्तियाँ फैलाई गई थीं और जो कुछ 'कोहेनूर' में निकला था वह सब गप्प है। उसी समय सनातन धर्म मण्डल के उत्तर में बाबू मुन्नालाल और स्वामी स्वात्मानन्द जी के व्याख्यान हुए। तब एक बडे विद्वान् संन्यासी स्वामी महानन्द जी ने अपनी सेवा आर्यसमाज को अर्पण की। स्वामी जी के बहुत साधू शिष्य हैं औ उनकी विद्या की पण्डित गुरुदत्त ने स्वयं प्रशंसा की। उस समय २० अन्य महाशयों ने समाज में प्रवेश के लिए प्रार्थना पत्र दिये। यह भी सुनाया गया कि ३५ नये सभासद पहले प्रविष्ट हो चुके हैं। उस समय उत्साह की लहर चल रही थी। सभा ११ बजे विसर्जित हुई।

भोजन के पश्चात् मैं भी लाला साईदास जी के वहाँ गया। यहाँ स्वामीगण लाला हंसराज, लाला मुल्कराज और चिरंजीव भी थे। अन्य आवश्यक कार्य उपस्थित हो जाने के पश्चात् मैंने यह विषय उपस्थित किया कि लकीर के फकीर बनते हुए आर्यसमाजियों को पुरानी संकुचित जातियों में विवाह सम्बन्ध परिमित नहीं रखना चाहिए, प्रत्युत गुण कर्मनुसार वर्ण व्यवस्था को व्यवहार में लाना चाहिए। लाला साईदास जी ने उस समय मुझे परम अत्याचारी (एक्स्ट्रीम - रैडिकल) की उपाधी दी। वहाँ से पण्डित गुरुदत्त के पास गया। वे मुझे पण्डित सभा में ले गये, जहाँ पण्डित दीनदयालु जी के मुझ से मूर्तिपूजा का विचित्र मण्डन सुना। फिर साढे आठ बजे की ट्रेन से जालन्धर लौटा।

इन दिनों आर्यभाईयों को पता लग गया कि मैं धन के राजीनामे का सर्वथा विरोधी हूँ। इसका एक उदाहरण मैं अपनी डायरी में से उद्‌धृत करता हूँ -

''५ फरवरी १८८९ मंगल। वसन्त का दिन था। प्रात: संध्या अग्निहोत्र करके अन्य सभासदों को साथ लेता हुआ समाज मन्दिर में पहुँचा। प्रथम भजन हुए फिर सामूहिक हवन किया गया। इस समय वेदमंत्रों का पाठ वास्तव में अति उत्तम तथा प्रभावशाली था। फिर साढे ग्यारह बजे तक एक भजन होकर प्रीतिभोज प्रारम्भ हुआ। सब भाइयों ने मिलकर सहभोज किया जिससे दो बजे निवृत्त हुए। इसके पश्चात् ४ बजे तक अन्तरंग सभा होती रही। अत्यन्तावश्यक विषय इस अधिवेशन में एक रामगोपाल नामी पुरुष की शुद्धि का था, जो कुछ काल में मुसलमान हो गया था। अन्तरंग सभा ने बडी निर्बलता दिखाई और उसे स्वयं शुद्ध करने के स्थान में अमृतसर भेज दिया''।

यहाँ यह जतलाने की आवश्यकता है कि अमृतसर आर्यसमाज एक नत्थूराम पण्डित को फाँसे हुए था जो स्वयं दक्षिणा लेकर पतित को हरिद्वार भेज देते थे और वहाँ पण्डे को १५ दिलवा गोबर मलकर स्नान कराने के पश्चात् शुद्धिपत्र दे देते थे। जिस पर अमृतसर के आर्यसमाज की बूब्बेशाही

(शेष पृष्ठ ७ पर)

thearyasamaj.org

गुरुकुल का आदर्श

विनोदचन्द विद्यालंकार

(कुलपिता अमर महात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी ने महर्षि दयानन्द सरस्वती की जन्म शताब्दी के अवसर पर सन् १९२५ में इस लेख के माध्यम से गुरुकुल किसे कहते हैं, उसके आचार्य एवं गुरुजनों में क्या-क्या गुण होने चाहिए, गुरुकुल के लिए कैसा स्थान चुनना चाहिए आदि विषयों पर अपने विचार प्रकट किये थे। गुरुकुल की स्थापना के समय भी उनके समक्ष ये ही आदर्श उपस्थित थे और उन्होंने इनके क्रियान्वयन का प्रयास भी किया था। ये विचार आज के सन्दर्भ में भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं जितने कि ८० वर्ष पूर्व थे, बशर्ते कि गुरुकुलों के संचालक एवं आर्यनेता इन पर मनन करें और इन्हीं के अनुरूप गुरुकुलों एवं अन्य आर्य-शिक्षा-संस्थाओं का संचलन करें। अत: इस लेख को अविकल रूप से यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।)

आचार्य और शिष्य दोनों के मिलाप से 'आर्य-कुल' अथवा 'गुरुकुल' बनता है। उस कुल में माता सावित्री और पिता आचार्य हैं। मनुस्मृति में लिखा है -

मातुरग्रेऽधि जननं, द्वितीयं मोन्जिबन्धने।
तृतीयं यज्ञदीक्षाया, द्विजस्य श्रुतिचोदनात् ।।
तत्र यद् ब्रह्म जन्मास्य, मोन्जिबन्धनचिन्हितम् ।
तत्रास्य माता सावित्री, पिता त्वाचार्य उच्यते ।।

प्रथम जन्म माता-पिता से होता है, दूसरा जन्म आचार्य-कुल में होता है और तीसरा यज्ञ दीक्षा से। मनु महाराज कहते हैं कि माता-पिता तो जीवन विद्या के ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण कामवश होकर भी सन्तनोत्पत्ति कर देते हैं, परन्तु वह जन्म अजर और अमर है जो ब्रह्मचारी को विद्या के गर्भ में रखकर आचार्य देता है। यत: विद्या आचार्य से मिली है, अत: जन्मदातृ माता की अनुपस्थिति में माता का स्थान भी उसी को ग्रहण करना पडता है। अथर्ववेद, काण्ड ११, अध्याय ३, सूक्त ५ के मन्त्र ३ में आचार्य का लक्षण और उसका कर्तव्य इस प्रकार बतलाया है-

आचार्य उपनयमानो ब्रह्मचारिणं कृणुते गभमन्त: ।
तं रात्रीस्तिस्त्र उदरे बिभर्ति तं जातं द्रष्टुमभिसंयन्ति देवा: ।।

'ब्रह्म प्राप्ति की इच्छा रखनेवाले ब्रह्मचारी को आचार्य अपने समीप करके उसे गर्भ रूप से धारण करता है, उसको तीन रातों तक उसी गर्भ में रखता है, तब उसके उत्पन्न होने (द्वितीय वार आत्मिक जन्म लेने) पर उसको देखने के लिए विद्वान् आते हैं'।

वे तीन रात्रि क्या हैं? २४ वर्ष का ब्रह्मचर्य पूर्ण कर वसु ब्रह्मचारी प्राचार्य के समाने बद्धान्जलि खडा होता है। आचार्य घर जाने की अनुमति देता है। श्रद्धा से पूरित 'वसु' ब्रह्मचारी कहता है - 'भगवन् ! अभी एक रात्रि ही समाप्त हुई है, केवल उत्तम गुण को अपने अन्दर धारण करना सीखा है, अभी अपरिपक्व हूँ, प्रलोभन मुझे सत्य मार्ग से विचलित कर सकते हैं, मुझे विशेष साधन सम्पन्न होने का अवसर दीजिये।' शिष्य की असीम श्रद्धा को देखकर गुरु के हृदय से वचन निकलता है - एवमस्तु ।

३२ वर्ष की आयु तक तप पूर्वक विद्याभ्यास करता हुआ नैष्ठिक ब्रह्मचारी 'रुद्र' संज्ञा का अधिकारी बनता है। उस समय वह ऐसा शक्ति-सम्पन्न होता है कि विषय, पाप वासनायें तथा सम्पूर्ण दुर्वृत्तियाँ उसकी बनावट से टकरा-टकरा कर छिन्न - भिन्न हो जाती है। आचार्य फिर घर लौटने से निवेदन करता है - 'भगवन् ! अभी अंधियारी तीसरी रात सामने है, आक्रमण पर आक्रमण हो सकते हैं, अभी स्वरूप से तेजधारण नहीं कर सकता हूँ, कुछ काल और आश्रम-निवास की आज्ञा दीजिये।'

तीसरी रात भी समाप्त हुई । हृदय के अन्दर तेज ही तेज है । सुख की कान्ति आदित्य ब्रह्मचारी बनने की साक्षी है। सावित्री के गर्भ से बाहर निकलकर आचार्य को प्रणाम करता है । ब्रह्मचारी के मस्तिष्क को सूर्य की भांति देदीप्यमान देखकर आचार्य आशीर्वाद देता है- तू अब 'आदित्य' है, तेरा प्रकाश स्थिर होगा, अन्धकार का साहस न होगा कि तेरे मार्ग को काट सके। जा, देवमण्डल में सम्मिलित हो जा। तब देवमण्डल उसका प्रेमपूर्वक स्वागत करता है।

आचार्य कैसा होना चाहिए, यह ऊपर के प्रमाणों से कुछ - कुछ समझ में आने लग गया है। परन्तु एक स्पष्ट प्रतीत होती है। शान्त बत्ती को जलती हुई बत्ती से ही जलाकर प्रकाशमय बना सकते हैं। बुझी हुई बत्ती से चिराग नहीं जल सकता। इसीलिए उक्त सूक्त के १७ वें मन्त्र में कहा है -

'आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते।'

आचार्य को पूर्ण ब्रह्मचारी होना आवश्यक है। इतना ही नहीं, उसके लिए यजुर्वेद में कहा है-

ब्राह्मणास: पितर: सोम्यास: शिवे नो द्यावा पृथिवी अनेहसा।
पूषा न: पातु दुरिता दृऋतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशँ स ईशत।।

- अध्याय २९ । म. ४७

(सोम्यास:) उत्तम, आनन्दकारक गुणधारक (ऋतावृध:) सत्य को बढानेवाले (पितर:) रक्षक, पालक (न:) हमारे लिये (अनेहसा) सदैव रहनेवाले (द्यावा पृथिवी) प्रकाशयुक्त तथा अप्रकाशित लोक (शिवे) कल्याणकारी हों। (पूषा० पुष्टि कारक बल प्रदाता परमात्मा (न:) हमारी (दुरिता) दुर्व्यसनों, दोषों से (पातु) रक्षा करे । (न:) हम पर (अघशंस) पाप से प्रशंसक (माकि: ईशत) मत समर्थ हों।

यह भाव है जो हृदय में धारण करके ब्रह्मचारी आचार्य के सन्मुख जाने का साहस करे और गुरुकुल में प्रवेश करते समय गुरु से नीचे लिखी प्रार्थना करे-

ऋजीते परि वृङ्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनू: ।
सोमो अधि ब्रवीतु नोऽदिति: शर्म यच्छतु ।।

- ऋ. ६.७५.१२ ।।

'पूज्य आचार्य ! अपने तेज से हमारे मानसिक और शारीरिक रोगों को सब और से दूर कीजिये । हमारा शरीर पत्थर के तुल्य दृढ हो । हमें मृत्यु और अमृत का रहस्य समझाइये और हमारे लिए कल्याण का विधान कीजिये।

आचार्य कौन होना चाहिए ?

(१) जिसमें न केवल रक्षक पिता के ही गुण हों, प्रत्युत जो माता के तुल्य शिष्य के सब भावों की समझ को अपने प्रेम की गोद उसके अर्पण कर

thearyasamaj.org

सके। माता जिस प्रकार अपनी सन्तान पर अपने आपको न्यौछावर कर सकती है और जिस प्रकार वह सन्तान के गुह्य से गुह्य भाव को समझकर उसका संशोधन कर सकती है उसी प्रकार आचार्य में भी वह योग्यता साधारण बन जानी चाहिए। जिस विद्वान् गृहस्थ पर अपनी सन्तान की माता के अभाव में दोनों बोझ पड चुके हैं और जो इस परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुका हो वही ब्रह्मचारी को अपनी ओर आकर्षित करने का साहस कर सकता है।

(२) जो स्वयं आदित्य पद को प्राप्त होकर स्वभावत: अन्धकार को दूर नहीं कर सकता वह आचार्य का कर्तव्य पूर्णतया पालन नहीं कर सकेगा। ब्रह्मचारी के सम्पूर्ण अंगों और प्रत्यंगों का निरीक्षण प्रतिदिन करना आचार्य का कर्तव्य है। उसके अन्दर ऐसा दृढ संकल्प होना चाहिए जिससे बिना प्रयास के ब्रह्मचारी के व्यसन दूर हो सकें।

(३) आचार्य के इस तेज के प्रभाव से ब्रह्मचारी के मानसिक और शारीरिक रोग दूर हो सकते हैं। आचार्य के हृदय मन्दिर के कपाट ब्रह्मचारी के लिए हर समय खुले रहने चाहिए।

(४) ब्रह्मचारी अपने शरीर को चट्टान की तरह दृढ बनाना चाहता है। आचार्य का शरीर और मन अपने शिष्य के लिए अडोल होना चाहिए। उसको इतना साधन-सम्पन्न होना चाहिए कि ब्रह्मचारी की आवश्यकताओं के अतिरिक्त और कोई चिन्ता उसे अपनी ओर खींच न सके।

(५) मानसिक शिक्षा तो वर्तमान सांसारिक विद्यालयों में अच्छी से अच्छी मिल सकती है। संसार का दिखलावा उससे पूरा हो सकता है। परन्तु गुरुकुल में करने का बल लाभ करता है। 'आदित्य' आचार्य शिष्य के अन्दर ऐसा प्रकाश भर देता है कि बिना परिश्रम के सहज में ही जीवन और मृत्यु के प्रश्न उसके लिए हल हो सकते हैं, अत: आचार्य, वेद तथा वेदाङ्ग का रहस्य सहित ज्ञाता होना आवश्यक है।

सारांश यह कि राष्ट्र का कल्याण इतना राष्ट्रपति और उसके अमात्यों की शक्ति पर निर्भर नहीं होता, जितना कि राष्ट्र के आचार्यो के सदाचार और तपोबल पर। जब तक ऐसा आचार्य न मिले और जब तक ब्रह्मचारियों के साथ उस का निर्विघ्न सम्बन्ध न रहे तब तक गुरुकुल का ढोंग मात्र ही रहता है। यदि किसी गुरुकुल को आदर्श तक पहुँचना हो तो आचार्य और उपाध्यायों के अन्दर ये उच्च भाव अवश्य आने चाहिये।

स्थान और सामग्री

जब आचार्य वास्तविक गुण-सम्पन्न मिल जाये तब एकान्त स्थान में गुरुकुल भवन का निर्माण होना चाहिए। वेद में कहा है -

'उपह्वरे गिरीणां संगमे च नदीनां धिया विप्रा अजायत'

सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति के लिए हिमगिरि की उदार, प्रशान्त और प्रभावशाली शोभा से बढकर और कोन-सा दृश्य हो सकता है ? देवनद के किनारे से बढकर आत्मचिन्तन के लिए प्रकृति का सूक्ष्म रूप से अध्ययन करने के लिए और कौन सा दिव्यतप स्थान हो सकता है? पुराने मन्दिरों, जलाशयों और नदी के किनारों को देखो, भक्तजनों की सन्ध्या के लिए कैसे अपूर्व शिलायुक्त आसन बनाये होते हैं। जहाँ एक ओर प्राकृतिक शुद्ध सौन्दर्य विप्र उत्पन्न करने में सहायक होते हैं, वहाँ वर्तमान गिरे हुए सांसारिक वायुमण्डल से ब्रह्मचारियों की रक्षा करना ही ब्रह्मचर्याश्रम की कृतकार्यता का मूल मन्त्र है।

ऐसे एकान्त शान्त देश में वृक्षों का बाहुल्य होना चाहिए, जिनकी छायाके नीचे ब्रह्मचारी विद्याध्ययन कर सकें। सिवाय उन दो चार मकानों के जिनमें पुस्तकों को सुरक्षित रखने और पदार्थ की शिक्षा का प्रबन्ध हो, शेष निवास और पढाई के स्थान बहुत सादे होने चाहिए। भोजन पुष्टिकारक और सात्विक अवश्य हो, परन्तु वस्त्र सादे और इतने कम होने चाहिए कि ब्रह्मचारी में आलस्य और प्रमाद का समावेश न हो सके।

गुरुजनों का कर्तव्य

गुरुकुल के आचार्य के अधीन जितने और अध्यापक हों सबको सादे जीवन और सदाचार में उसी के प्रतिनिधि बनना चाहिये। कृष्ण भगवान् ने कैसा उत्तम उपदेश दिया है। निष्कामता के मर्म के समझाते हुए अर्जुन से भगवान कहते हैं- हे अर्जुन! मुझे तीनों लोकों में कोई कर्तव्य शेष नहीं रहा हैं, परन्तु मैं फिर भी वैदिक कर्म करता हूँ, यदि मैं कर्म छोड दूँ तो संसार में उल्कापात हो जाये, क्योंकि जिस मार्ग का अनुसरण नेतागण करते हैं जनता उसी के पीछे चलती है।

माता-पिता जो काम करते हैं, सन्तान उसी का अनुसरण करती है। यदि गुरुजन कंधी, पट्टी और शौकीनी करेंगे तो अपने ब्रह्मचारी पुत्रों को उनसे वंचित कैसे कर सकते है? अनुभव की बात है कि गृहस्थ में जो साधारण उचित भोग समझे जाते हैं उनमें फंसे रहकर गुरुजन शिष्यों का कल्याण नहीं कर सकते। जब गुरु मिर्च, मसाले आदि खाता है तो वह ब्रह्मचारियों को तपस्वी कैसे बना सकता है? गुरु को शिष्य का मार्गदर्शक बनने के लिए गुरुकुल रूपी अभिनय का नायक बनना आवश्यक है। परन्तु शहरों के अभिनय से इस अभिनय का बडा भेद है। ाहरों का अभिनय बनावटी होता है। गुरुकुल की नाट्यशाला वास्तविक है। इसी लिए गुरुजनों को वास्तविक नायक बनना चाहिये।

गुरुकुल का शिक्षा-क्रम

आजकल गुरुकुलों के कुछ संचालकों में शिक्षा-क्रम पर मतभेद हो रहा है। ऋषि दयानन्द ने वैदिक शिक्षा के सर्व विषय गिना दिये है। उनका परिज्ञान प्राप्त करने के लिए शिष्यों के बुद्धि-भेद समय भेद होता ही रहेगा। संसार की अवस्था के परिवर्तन के कारण उसके क्रम में भी भेद आता रहेगा। यह सब गौण बातें हैं। मुख्य बात यह है कि शुद्ध आर्ष-ग्रन्थ की शिक्षा और विषमय अनार्ष ग्रन्थों का त्याग। ग्रन्थ गौण हैं, ग्रन्थों में लिखत शब्द और उनका सम्बन्ध गौण हैं। मुख्य तो शरीर, इन्द्रिय, मन, बुद्धि और आत्मा को समान शिक्षा है, शिक्षा सार्वदेशिक होनी चाहिए, न कि एकदेशी। गुरुकुल में चौबीसों घण्टे आचार्य की दृष्टि ब्रह्मचारियों पर रहनी चाहिए। सन्ध्या, अग्निहोत्र, शारीरिक व्यायाम, खेलों का मैदान, भोजनशाला और विद्यालय सब कामों में आचार्य के साथ सब गुरुजन ब्रह्मचारियों को नमूना बनकर दिखलायें।

आर्थिक स्थिति का प्रभाव

आजकल सब संस्थायें चाहे वे शिक्षा सम्बन्धी हो व अन्य - भिक्षा के आश्रय चल रहीं हैं। तब इस वर्तमान लोक मर्यादा से गुरुकुल के आचार्य कैसे मुक्त हो सकते है? प्राचीन काल में आचार्य- कुल राजाओं और श्रीमानों को बल से अपनी और आकर्षित करता था। वे बिना मांगे गुरूकुल का कोष भर देते थे। आज आचार्य धन-सन्चय के लिए दर-दर मारा फिरता है, व्यभिचारियों और दुराचारियों से धन प्राप्त करने के लिए उनकी खुशामदें करता है और गुरुकुल में लौटकर ब्रह्मचारियों को सत्यमार्ग पर चलाना चाहता हैं।

thearyasamaj.org

परन्तु अक्खड कवि की उक्ति को भूल जाता है –

'जिन्ह के अगुआ भये भिखारी, उनकी वाट-गुर्सय्यन भारी।'

जो धन झूठ, फरेब और अन्य पाप द्वारा कमाया गया है वह गुरुकुल के लिए उसी प्रकार के प्रभाव उस पर पडेंगे। वह धन मांगा हुआ भी बडी ऐंचातानी से मिलता है। भक्त कबीर कह गये है –

सहज मिले सो दूध सम, मांगा मिले सो पानी ।

कह कबीर वह रक्त सम, जामें ऐंचा तानी।

इस प्रकार के रक्त – समान धन को लेकर गुरुकुल का क्या कल्याण हो सकता है?

तब आवश्यकता क्या है ?

(क) आचार्य सर्वगुण सम्पन्न बन कर अपने अनुकूल उपाध्याय और अध्यापक इकट्ठे कर ले।

(ख) कोई धर्मात्मा धनाढ्य पुरुष श्रद्धा से प्रेरित हो पर्याप्त धन स्थिर कोष के लिए दे दें।

(ग) वैदिक उपदेश से प्रेरित ब्रह्मचारी, कुल में प्रविष्ट होकर अपने परिश्रम से उसके भरण पोषण का उपाय करें। सादे मन्दिर स्वयं बनावें, फल-भाजी स्वयं उत्पन्न करें, खेती का काम भी कृषिकारों की सहायता से स्वयं करावें, कपडा स्वयं बनावें, सारांश यह कि गुरुकुल का सारा काम इस प्रकार से चलावें जिससे कि माँगने की आवश्यकता न रहे।

(घ) तब किसी ऐसे स्थान की तलाश न रहेगी जहाँ हिन्दू यात्रियों से धन खींचा जा सके । वहाँ प्रतिवर्ष उत्सव रचा संसार के प्रलोभनों को जमा करके ब्रह्मचारियों के हृदय डांवाडोल भी न हुआ करेंगे और मूर्ख श्रीमनों से धन बटोरने के लिए उनकी हाँ भी न मिलानी पडेगी ।

(ङ) ब्रह्मचारियों पर संसार के प्रभाव भी अचानक न पडेंगे, प्रत्युत शनैः शनैः गुरुजन ही उनको संसार में प्रविष्ट करें, यहाँ तक कि अन्तिम तीन चार वर्षों में वे स्वतन्त्रता से जनता में मिलकर भी शुद्ध हृदय रहकर जनसाधारण को अपने पीछे चला सकेंगे।

यह एक मधुर स्वर्णिम स्वप्न है, जिसका कभी-कभी ध्यान आ जाता है। वे सज्जन धन्य होंगे जिन्हें यह स्वप्न जागृत में परिवर्तित हुआ दिखाईं देगा।

जिस तत्त्ववेत्ता ऋषि दयानन्द की प्रेरणा से यह आनन्दमय स्वप्न हृदय के अन्दर उठता रहा है उसकी जन्म शताब्दी पर कई प्रकार की भेटे लेकर आर्य-सन्तान पहुँचेगी। ऋषि के ज्येष्ठ शिष्य आत्मानन्द सरस्वती ने मुझे बतलाया था कि चित्तौडगढ की उच्च अटारी पर खडे होकर चारों ओर मैदान में दृष्टि डाल ऋषि दयानन्द ने कहा था- 'यहाँ सच्चे क्षत्रिय गढने के लिए गरुकुल खुलना चाहिये।'

जब वर्तमान भूमि पर गुरुकुल खुला तब मुझे ऐसा भान हुआ कि मानों हरिद्वार के कुम्भ से चलकर ऋषि दयानन्द ने इसी स्थान पर समाधि लगा सच्चें ब्राह्मण उत्पन्न करने का सङ्कल्प किया था। इसीलिए इस भूमि ने मुझे अपनी ओर खींच लिया। इस कल्पना को जाने दीजिये, परन्तु क्या कोई उच्च आत्मा ब्रह्मचारियों को दूसरा जन्म देने के साधन इकट्टे करने का साहस न करेगा? मेरा हृदय कहता है कि जन्म शताब्दी के समय ऋषि की आत्मा इसी भेंट को सर्वोत्कृष्ट समझेगी।

'स्वामी श्रद्धानंद एक विलक्षण व्यक्तित्व' से साभार

(पृष्ठ- ४ से ...)

मोहर लग जाती थी । कहाँ वह समय और कहाँ आज, जबकि आर्यसमाज में जन्म के ईसाई, मुसलमानादि बेधडक सम्मलित हो सकते हैं।

धर्मपरायणता का पहला दृश्य

१४ माघ (२७ जनवरी) को आदित्यवार था। उस दिन के वृत्तान्त में अपने साप्ताहिक अधिवेशन में सम्मिलित होने के हाल लिखते हुए मैंने लिखा था–

"देवराज ने सत्य पर बडा उत्तम और शिक्षाप्रद व्याख्यान दिया। आज के व्याख्यान में कुछ विशेष बल था।" मुझे स्मरण है कि उन दिनों देवराज जी पर धर्म का विशेष रंग चढा हुआ था। शायद वह व्याख्यान किसी आनेवाली घटना की सूचना थी। देवराज जी के पिता ने उन्हें स्पष्ट लिख दिया था कि यदि आर्यसमाज का प्रचार करना है तो बर्मा आदि की ओर चले जाएँ, जालन्धर में रहकर अपने पिता को मित्रों से उलाहना न दिलाएँ। देवराज जी के सुपुर्द अपने परिवार की रियासत का खजाना था परन्तु उन्होंने सब हिसाब ठीक करके अपने निज जेब खर्च के डेढ सौ रुपये लिये और बर्मा जाने के लिए कलकत्ते चल दिये। तब पिता को होश आया और उन्होंने आदमी भेजकर उन्हें लौटा मँगाया। उधर मैंने नित्य किसी न किसी पास के ग्राम में जाकर वैदिक धर्म का प्रचार आरम्भ कर दिया। इससे राय शालिग्राम जी को पता लग गया कि आर्यसमाज के प्रचार का काम किसी विशेष व्यक्ति पर ही निर्भर नहीं है।

देवराज जी के इस अपूर्व साहस का परिणाम यह हुआ कि धर्म के कार्यों में उनका रास्ते की रुकावटें दूर हो गईं। पिताजी की दृष्टि में उनका गौरव बढ गया और बेधडक काम करने लग गये।

इस अन्तर में अन्तरंग सभा के अन्दर शुद्धिविषयक आन्दोलन मैंने जारी रखा और बहुत से सभासदों को अपनी सम्मति के अनुकूल कर लिया किन्तु देवराज जी के लौटने पर मामला ही स्पष्ट हो गया क्योंकि वे अब 'समय के न आने' के ढकोसले से मुक्त हो चुके थे । इन दिनों मेरा अधिक समय नगर के अन्दर प्रचार करने में लगता था क्योंकि मैं नहीं चाहता था कि कोई भाई भी देवराज जी की अनुपस्थिती को अनुभव करे। प्रेस और समाचार-पत्र चलाने के विचार ने मेरा पत्रव्यवहार भी बढा दिया था, किन्तु इन सब बढे कामों के साथ एक ओर तो मैंने भूमिका लिखकर एक भजन-पुस्तिका का आरम्भ कर दिया और दूसरी ओर तो हर्बर्ट स्पेन्सर की पुस्तकों के साथ ऋषि दयानन्दकृत वेदभाष्य का स्वाध्याय भी आरम्भ कर दिया।

इधर वह सब कुछ हो रहा था और उधर अपने ग्राम तलवन से दो मील दूर अपनी भूमि में लगवाने के लिए फलों के वृक्ष भेज रहा था क्योंकि इस समय यही विचार था कि एकान्त सेवन के लिए यहाँ एक छोटासा बंगला बनवाया जावे।

इन सब कामों के अतिरिक्त अपनी प्रस्ताविक पुत्री पाठशाला को भी नहीं भूला था, क्योंकि ९ फाल्गुन (२१ फरवरी) को राय बहादुर मास्टर प्यारे लाल इंस्पेक्टर ऑफ स्कूल्स को मिलकर उसके विषय में बातचीत की थी।

कल्याण मार्ग का पथिक से साभार

thearyasamaj.org

विचार शक्ति का चमत्कार

(परमात्मा क्या कर सकता है और क्या नहीं कर सकता)

परमात्मा सर्व शक्तिमान है। आइए इस पंक्ति को हम सही रूप में समझे। निम्नलिखित लेख विचार शक्ति पर ही आधारित है।

केवल परमात्मा के ही अधीन कौन से कार्य हैं?

१) सृष्टि की उत्पत्ति, विकास और लय करना।
यह कार्य केवल परमात्मा कर सकता है और उसी के अधीन यह सारा कार्य है।

२) सृष्टि के विकास के लिए नियम बनाना । जैसे सूर्य, चंद्रमा, सितारे यह सभी किसी न किसी नियम के अधीन ही ब्रह्माण्ड में विचरण करते हैं और उसी तरह हवाओं का चलना, जल एवं अग्नि का नियंत्रण में होना आता है।

३) इस सृष्टि के सुखों को भोगने हेतु मानव जाति का निर्माण करना।
जीवन और मृत्यु केवल परमात्मा के अधीन है।

४) मनुष्य को अच्छे कर्म करने की प्रेरणा देते रहना। परमात्मा ज्ञान और शक्ति का अथाह सागर है। उसकी इस प्रेरणा से ज्ञान और शक्ति मनुष्य को स्वाभाविक रूप से मिलती रहती है।

५) कर्मों का फल देना।
परमात्मा हमें कर्मों का फल किस प्रकार देता है इस पर विचार करते हैं। पहले तो हम यह समझ ले कि फल प्राप्त होने मे समय लगता है। हम अपने कर्मों का फल तुरन्त चाहते है, उस पर नियंत्रण करना चाहिए। दूसरा, हमने कर्म सही किया है या गलत उसका निर्णयकर्ता केवल परमात्मा है। तीसरा, कब किसको, किस रूप में और कितना फल देना है उसका भी नियमन वही करता है। चौथा, किस कर्म का फल क्या है यह भी उसी के अधीन है। यह पूरा विचार इस तथ्य पर आधारित है कि बिना परीक्षक के विद्यार्थी की उत्तर पुस्तिका का कोई महत्व नहीं। जब तक हमने उत्तर सही लिखा है कि नहीं यह जाँचने वाला न हो तो उसका कोई महत्व नहीं रह जाता।

परमात्मा क्या नहीं कर सकता।

१) परमात्मा जीवात्मा को बिना कर्म किये फल नहीं दे सकता।

२) परमात्मा कर्मों के विरुद्ध फल नहीं दे सकता। जैसा कर्म वैसा फल और जितना कर्म उतना फल के सिद्धांत पर अटल रहता है।

३) बिना कर्म किये परमात्मा को भी जीवात्मा के भविष्य के बारे में पता नहीं अपितु पूर्व कर्मों के आधार पर उसे जीवात्मा के भविष्य का पता है।

४) परमात्मा अपने ही बनाए इस नियमों के विरुद्ध नहीं जा सकता।

५) असम्भव को सम्भव नहीं बना सकता । जैसे हाथी को मनुष्य बना दे या घोडे को हाथी इत्यादि।

६) अभाव से भाव की उत्पत्ति नहीं कर सकता । जैसे निर्धन व्यक्ति से धन नहीं उधवा सकता, हथेली पर सरसों नहीं उगा सकता, बिना जमीन के खेती नहीं हो सकती। भाव से अभाव का भ्रम हो सकता है।

७) तर्क विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता। इसमें हम कह सकते है कि बंदूक से निकली गोली वापस नहीं हो सकती, कमान से निकला तीर वापस नहीं जा सकता, मुँह से निकला शब्द वापस नहीं हो सकता और व्यतीत हुआ समय वापस नहीं आ सकता।

–राजकुमार भगवतीप्रसाद गुप्त

जरुरी नहीं कि हम जितना गुड़ डालें उतना ही मीठा हो जाए

एक कलाकार के सामने बिक्री के लिए लगभग एक जैसी दो लकडी की मूर्तियां रखी हुई थी । एक मूर्ति की किमत थी दो हजार रुपये और दूसरी की किमत थी पांच हजार रुपये । मूर्तियों की किमतों में भारी अंतर के विषय में पूछने पर कलाकार ने बताया कि जो ज्यादा कीमती मूर्ति है उसकी लकडी बहुत अच्छी है और उसके रेशों की बनावट ऐसी है कि उस पर की गई खुदाई एकदम साफ और सुंदर दिखाई पडती है । लेकिन जो कम कीमती मूर्ति है, उस पर किया गया काम भी उतना सुंदर और साफ नहीं है । ये पूछने पर कि बढिया मूर्ति को बनाने में समय भी ज्यादा लगा होगा, कलाकार ने उत्तर दिया, 'समय तो बराबर ही लगता है । लकडी अच्छी निकल आए तो काम जल्दी और अच्छा हो जाता है और दाम भी अच्छे मिल जाते है।

'काम जल्दी और अच्छा हो और दाम भी अच्छे मिल जाएं, इसलिए आप हमेशा अच्छी लकडी का चुनाव क्यो नही करते?' कलाकार ने बताया कि कोशिश तो होती है, लेकिन यह हमेश संभव नहीं हो पाता। एक ही प्रजाति में हर पेड की लकडी की क्वालिटी में भी काफी अंतर मिल जाता है। कई बार लकडी पर कुछ काम करने के बाद लकडी टूट या फट जाती है। इससे सारी मेहनत बेकार चली जाती है । जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी ऐसा ही होता है । कहा जाता है कि जितना गुड डालोगे उतना ही मीठा होगा, लेकिन जीवन में यह हमेशा संभव नहीं होता । आज अधिकांश माता-पिता बच्चो को शिक्षा और पढाई-लिखाइ को लेकर बहुत चिंतित रहते है। वें इसके लिए कोई कसर नहीं रख छोडते और जब बच्चा उनकी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता तो मायूस हो जाते है।

अलग-अलग प्रकार की लकडियों के रेशों की बनावट की तरह ही हर बच्चे के व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों की बनावट भी अलग और विशिष्ट होती है । हर बच्चे को एक जैसा तथाकथित बडा आदमी बनाना संभव नहीं, लेकिन हर बच्चे को किसी न किसी निश्चित आकार में ढालना तो संभव है। यही स्वीकार करने को हम तैयार नहीं होते और इसी से पैदा होती है ज्यादातर समस्याएं । हम किसी भी धातु, पत्थर या लकडी के टुकडे को बेशक बेशकिमती कलाकृति में न परिवर्तित कर सके, लेकिन यदि उसे एक उपयोगी आकार और स्थान ही उपलब्ध करवा दे तो यह कलात्मकता ही होगी । गीता में कहा गया अकारण नहीं है कि हम कर्म करें, फल की इच्छा नहीं। फल चाहे जो भी हो निष्काम कर्म के द्वारा हम जीवन में उत्कृष्टता ही पाते हैं।

thearyasamaj.org

।। ओ३म् ।।

लार्ड मैकाले का गहन षडयन्त्र आर्य बाहर से आये थे, सफेद झूठ है सृष्टि प्रारम्भ से ही आर्यों का जन्म भारत में हुआ था

पं. उम्मेद सिंह विशारद
मो. ९४११५१२०१९.

युग पुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के अष्टम् समुल्लास में लिखतें हैं कि मनुष्यों की आदि सृष्टि त्रिविष्टप अर्थात् तिब्बत में हुई थी और एक मनुष्य जाति थी। पश्चात् **विजानी ह्यार्य्यान्ये च दस्यवः।** यह ऋग्वेद का वचन है। श्रेष्ठों का नाम आर्य विद्वान देव और दूष्टों के दस्यु अर्थात डाकू मूर्ख नाम होने से आर्य और दस्यू दो नाम हुए।

उत शूद्रे उताऐ वेद वचन। आर्यों में पूर्वोक्त प्रकार से ब्राह्मण,क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार भेद हुए। द्विज विद्वानों का नाम आर्य और मूर्खों का नाम शूद्र और अनार्य अर्तात अनाड़ी नाम हुआ।

सर्वप्रथम इस देश का नाम कोई भी नहीं था और न कोई आर्यों के पूर्व इस देश में बसते थे। क्योंकि आर्य लोग सृष्टि के आदि में कुछ काल पश्चात् तिब्बत से सीधे इसी देश में आकर बसे थे। कोई अज्ञानवश कहते है कि ये लोग ईरान से आये, इसी से इन लोगों का नाम आर्य हुआ है। इनके पूर्व यहां जंगली लोग बसते थे कि जिनको असुर और राक्षस कहते थे। आर्य लोग अपने को देवता बतलाते थे और नका जब संग्राम हुआ उसका नाम देवासुर संग्राम कथाओं में ठहाराया। **यह बात सर्वथा झूठ है। क्योंकि विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्ध्या शासदव्रतान।।** उत शूद्र उतार्ये यह लिख चुके है कि आर्य नाम धार्मिक विद्वान आप्त पुरुषों का और उससे विपरीत जनों का नाम दस्यू अर्थात डाकू दुष्त अधार्मिक और अविद्वान है, तथा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य द्विजों का नाम आर्य और शूद्र का नाम अनार्य अर्थात अनाडी है।

महर्षि दयानन्द दु:खित हृदय से लिखते है कि अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर विरोध से आर्यों का अखण्ड स्वतन्त्र स्वाधीन निर्भय राज्य इस समय नहीं है जो कुछ है सो भी विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है। कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात प्रजा पर पिता-माता के समान कृपान्यास और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।

अंग्रेज गर्वनर लार्ड मैकाले का भयंकर षडयन्त्र -

सन १८५७ की क्रान्ति असफल होने के कारण भीतरघात था तथा देश द्रोहियों के कारण असफलता मिली, अंग्रेजों ने बुरी तरह कुचल दिया था। स्वतन्त्रता का नाम लेना भी भयानक था। ऐसी विषम परिस्थितीयों में महर्षि दयानन्द जी ने स्वतन्त्रता का नवजागरण किया। १८५७ से १९४७ तक देश के नवयुवकों में सर्वाधिक आर्यवीरों ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के महान यज्ञ में आहुतियां दी, फांसी के फन्दों को चूमा, लाखों वीर भारत के लिए शहीद हुए। आज संसार उनके नाम से भी परिचित नहीं है। महर्षि की प्रेरणा से ८० प्रतिशत आर्य समाजियों ने अपने गरम गरम रक्त से भारत मां का तिलक किया था।

लार्ड मैकाले ने जब देखा कि आर्य लोग राष्ट्रभक्त, ईश्वरभक्त चरित्रवान है, सर्वप्रथम इनको ही देशवासियों के दिलों में गिराना है। मैकाले ने शिक्षा द्वारा भारत की संस्कृति व संस्कार ही बदल डाले। इतिहास में पढाया जाने लगा आर्य बाहर से आये और भारत पर काबिज हो गये। जो सर्वदा झूठ है।

आर्यों की जन्म भूमि, कर्म भूमि और धर्म भूमि भारत ही है। आज तक आर्य समाज संगठन इस सफेद झूठ (आर्य बाहर से आये) को इतिहास के पन्नों से नहीं हटवा सके हैं।

कुछ आर्यों के नाम अवलोकन करें। यहीं पर सर्वप्रथम मानव की सृष्टि हुई। यहीं पश्चात ऋषियों को इेश्वर ने वेद का ज्ञान दिया था, यहीं पर ऋषि पतन्जलि, व्यास, जैमिनी ने दर्शन शास्त्रों का बोध कराया, यहीं पर मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगी राज श्रीकृष्ण हुए। यहीं पर महात्मा बुद्ध ने मानवता का पाठ पढाया, यहीं पर मुमारिल भट्ट ने वेदों की रक्षा की। यहीं पर बाल्मिकी, सूरदास, तुलसीदास, कबीरदास, रविन्द्रनाथ टैगोर आदि सन्त कवि हुए। यहीं पर छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, भामाशाह, पृथ्वीराज चौहान हुए। यहीं पर महारानी पद्मावती, दुर्गा, मदालसा, सीता, द्रौपदी, अनुसया, गान्धारी, महान विभतियाँ हुई। यहीं पर झांसी की रानी रणचण्डी लक्ष्मीबाई हुई। यहीं पर गुरु गोविन्द सिं, वीरवन्दा बैरागी, सरदार भगत सिंह, चन्द्र शेखर आजाद, वीर सावरकर, सुभाष चन्द्र बोज़, पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा गांधी हुए। यहीं पर योगीराज अरविन्द, बाल गंगाधर तिलक, बिपिन चन्द्र पाल, लाला लाजपतराय, महात्मा हंस राज, स्वामी विवकेनन्द हुए।

योगीराज श्री कृष्ण के बाद युग प्रवर्तक वेदों के उद्धारक, महान समाज सुधारक **महर्षि दयानन्द जी** हुए। इस प्रकार लाखों-लाखों आर्य वीर, समाज सेवक धर्म प्रवर्तक इस भारत मां की पवित्र गोद में खेले है। ये सभी आर्य विभूतियां थी और फिर कैसे सहन कर सकते है कि आर्य बाहर से आये थे।

आर्य नेतृत्वों को भारत सरकार पुरजोर मांग करनी चाहिए कि इतिहास से उस पैराग्राफ को समाप्त किया जाए, जिसमें पढाया जाता है कि आर्य लोग बाहर से आये थे। यह भारतीय इतिहास में कलंक है, इसको मिटाना ही होगा।

पं. उम्मेद सिंह विशारद
वैदिक प्रचारक
गढ निवास - मोहकमपुर, देहरादून
मो. ९४११५१२०१९.

thearyasamaj.org

"ध्यान द्वारा तनाव-मुक्ति"

आसनों द्वारा शरीर को साधकर एवं प्राणायाम द्वारा मन को साधकर अब ध्यान द्वारा आत्मा को पकडना है। क्योंकि समस्त दोषों के संस्कार आत्मा के इर्द गिर्द चिपके रहते हैं। जब तक उन संस्कारों को दग्धबीज नहीं किया जाता वे बारम्बार हमें तंग करते रहते हैं। ध्यान द्वारा यह शोधन क्रिया हो जाती है और हमारी आत्मा निर्मल हो जाती है। ध्यान का मनोवैज्ञानिक अर्थ है - Attention without tension अर्थात् तनाव मुक्त सजगता। तनाव विचारों से होता है। यदि विचार संतुलित हैं तो तनाव नहीं। ध्यान पद्धति इन्ही विचारों को रोकने व उन्हें शुद्ध करने में सहायक होती है। चिकित्सक जॉनसन के अनुसार ध्यान का नियमित अभ्यास करने वाले व्यक्ति तनाव से शीघ्र ही छुटकारा पा लेते हैं तथा लोगों के व्यक्तित्व में हाइपोकोन्ड्रिया सीजोफ्रेनिया, टायलरमेनीफेस्ट, एन्जाइटो में उन व्यक्तियों को असाधारण सफलता मिली हैं। तथा लोगो के व्यक्तित्व में आशाजनक रूपान्तरण हुआ है। अमेरीका के वैज्ञानिक रॉबर्ट शा एवं डेविड कोल्व ने ध्यान के अभ्यास पर अपने प्रयोगों में पाया कि उन लोगों के शरीर एवं मस्तिष्क के बीच अच्छा समन्वय, सतर्कता में वृद्धि, मति-मन्दता में कमी, ज्ञान क्षमता में अभिवृद्धि हुई है, उनके शारीरिक न्यूरोमस्कुलर समाकलंन की क्षमता बढी है। वैज्ञानिक विलयक सीमैन ने बताया कि ध्यान करने वाले व्यक्तियों की मानसिकता में काफी परिवर्तन आता है।

आन्द्रे जोआ ने हॉलेण्ड में स्कूल के छात्रों को एक वर्ष तक नियमित ४५ मिनट ध्यान कराया उसके फलस्वरूप उन्हे अन्य छात्रों की अपेक्षाकृत अधिक बौद्धिक क्षमता वाला पाया गया। कठिन प्रश्नों को हल करने में अग्रणी रहे। उनका स्मृति विकास भी अधिक पाया गया।

हाईपरटेन्शन का प्रतिकार करने वाली औषधियां अपुकम्पी नाडी संस्थान की प्रवृत्ति का विरोध कर रक्तचाप को कम कर देती है जिन दवाओं का भयंकर दुष्परिणाम होता है। परन्तु ध्यान के प्रयोग से जहां रक्तचाप कम होता है वहा किसी प्रकार का दुष्परिणाम (side effect) नहीं होता है इसीलिए ध्यान एक निरापद मार्ग है।

ध्यान का उपचारात्मक प्रयोग है धूम्रपान, मद्यपान एवं मादक पदार्थों से व्यसनी को मुक्त करना। नशीले पदार्थों के सेवन से जो अल्पकालिक मस्ती आती है उसकी अपेक्षा ध्यान द्वारा होने वाली अनुभूति अधिक गहरी, निर्दोष एवं दीर्घ कालिक होती है।

ध्यान क्या है? एकाग्र चित्त अवस्था का नाम ध्यान है। "एकाग्रचित्ता यागे निरोधो व ध्यानम्" स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखा है - जब उपासना करना चाहें तब एकान्त शुद्ध देश में जाकर आसन लगाकर, प्राणायाम कर बाह्य विषयों से इन्द्रियों को ठीक मन को नाभि प्रदेश मे वा हृदय , कण्ठ, नेत्र, शिखा अथवा पीठ के मध्य हाड में किसी स्थान पर स्थिर कर अपने आत्मा और परमात्मा में मग्न होकर संयमी होवें।

ध्यान का फल बताते हुए स्वामी जी आगे लिखते हैं। इसका फल - जैसे शीत से आतुर पुरुष का अग्नि के पास जाने से शीत निवृत्त हो जाता है वैसे ही परमात्मा के समीप प्राप्त होने से सब दोष दु:ख छूट कर परमेश्वर के गुण, कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते है। इससे आत्मा का बल इतना बढेगा, वह पर्वत के समान दु:ख प्राप्त होकर भी न घबरावेगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है ?

शवासन में भी हम ध्यान कर सकते हैं। इस आसन में हमारा समस्त शरीर शान्त हो जाता है साथ ही साथ मन भी स्थिर व शान्त हो जाता है। इसमें हम शरीर के प्रत्येक अंग पर प्रत्येक अवयव पर शिथिल होने की स्वत: सूचना (auto suggessions) देते हैं जिससे शरीर के तन्तु स्वमेव शिथिल होते रहते है। इससे प्रत्येक कोशिकाओं में प्राणवायु संचारित हो जाती है तथा वहां पर होने वाले दुख दर्द भी स्वस्थ होने लगते हैं। मस्तिष्क की शक्ति की बचत हो जाती है मन शरीर के अंगों पर केन्द्रित हो जाने के कारण अचंचल हो जाता है मन के शान्त होते ही तनाव शिथिल हो जाता है।

संदीप आर्य

मन्त्री - वैदिक मिशन, मुम्बई.

" वैदिक दर्शन प्रतिष्ठान मुम्बई का प्रथम वार्षिकोत्सव"

रविवार दि. १६.११.२०१४ को वैदिक दर्शन प्रतिष्ठान का प्रथम वार्षिकोत्सव पाटीदार वाडी, बोरीवली में बडी धूमधाम से मनाया गया। इसमें यज्ञ के ब्रह्म प. नामदेव जी थे। भजनोपदेशक श्री वीरेन्द्र मिश्रा व श्री योगेश आर्य के सुन्दर सुमधुर गीतो से समस्त श्रोतागण झूम ऊठे। प्रमुख वक्ता वेद वेदांग गुरुकुल सुल्तानपुर उ.प्र. से पधारे डा. शिवदत्त पाण्डेय जी थे। अपने सारगर्भित उदगार में धर्म और मत मजहब पर विस्तृत विवेचना करते हुए अनेक तर्को, प्रमाणों एवं तथ्यों के आधार पर शब्दश: प्रभावोत्पादक व्याख्यान प्रस्तुत किये। जिससे सैकडों की संख्या में उपस्थित श्रोतागण मन्त्रमुग्ध हो गये।

इस समारोह में भारतीय आस्था के केन्द्र के अध्यक्ष स्वामी योगानंद सरस्वती, आर्य प्रतिनिधी सभा मुम्बई के मन्त्री श्री अरुण अब्रोल, रेड स्वस्तिक सोसाईटी के अध्यक्ष श्री टी. एस. भाल (आयपीएस) योग निकेतन संस्था गोरेगांव के अध्यक्ष श्री मधुसूदन सेकसरिया, वानप्रस्थ साधक आश्रम आर्यवन रोजड के प्रमुख श्री मनसुख भाई वेलाणी, श्री लधाभाई पटेल, श्री किशोर आर्य, अग्निपथ पत्रिका के सम्पादक श्री अरविंद राणा आदि विशेष अतिथि पधारे थे। इस कार्यक्रम को सफल बनाने में आर्य पुरोहित सभा मुम्बई, वैदिक वीर दल दहिसर तथा श्री मगनभाई, श्री विनय भाई, श्री अजित पटेल ने विशेष सहयोग प्रदान किया।

इस कार्यक्रम के अंतर्गत आर्य वीर दल के संचालन प. नरेन्द्र शास्त्री का शाल श्रीफल प्रशस्ति पत्र ट्राफी फूल माला आदि से विशेष सम्मान किया गया। इस समारोह का सफल संचालन वैदिक दर्शन प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री प्रभांरजन पाठक जी ने किया। वैदिक दर्शन प्रतिष्ठान के महामन्त्री श्री परेश भाई पटेल ने सबका धन्यवाद किया। सबने प्रीतिभोज का आनन्द लिया।

- संदीप आर्य

thearyasamaj.org

ज्योति हमसे कभी दूर न हो

आचार्य प्रियव्रत

मा नौ वधैर्वरुण ये त इष्टा-
वेन: कृण्वन्तमसुर भ्रीणन्ति
मा ज्योतिष: प्रवसथानि गन्म
वि षू मृधे: शिश्रथो जीवसे न: ।।७।।

अर्थ - (ये) जो (ते) तेरे (इष्टौ) इस संसाररूपी यज्ञ में (एन:) पाप (कृण्वन्तम्) करनेवाले को (भ्रीणन्ति) मार देते हैं (वधै:) अपने उन वधों से - पापियों को दण्ड देने के साधनों से (असुर) प्राणों को देनेवाले अथवा प्राणों में रमें हुए (वरुण) हे वरणीय भगवन् ! (न:) हमको (मा) मत मारिए, हम (ज्योतिष:) प्रकाश के (प्रवसथानि) वियोग को (मा) कभी मत (गम्न) प्राप्त होवें (न:) हमारे (जीवसे) जीवन के लिए (मृध:) हिंसाओं को - हमें पहुँचनेवाले भाँति - भाँति के कष्ट - क्लेशों को (सु) अच्छी प्रकार (विशिश्रथ:) शिथिल कर दीजिए, शक्तिहीन बना दीजिए।

यह संसार एक इष्टि है- एक यज्ञ है। भगवान इस यज्ञ के यजमान हैं । इस जगत् के प्रति हमारी दृष्टि वह होनी चाहिए जो एक यज्ञ के प्रति होती है। जब हममें से कोई यज्ञ करता है तब यज्ञ के समय यजमान और यज्ञभूमि में उपस्थित अन्य लोगों के मनों में पवित्र भावनाएँ होती हैं और उतने समय के लिए हम कोई अपवित्र कर्म भी नहीं करते। यज्ञकाल में हम पाप से बचे रहने का पूर्ण प्रयत्न करते हैं। यदि उस समय कोई किसी प्रकार की पापपूर्ण अनुचित बात करे, तो उसे निन्दनीय और दण्डनीय समझा जाता है। इस संसार को भी हमें इसमें रहते हुए यम की भावना से ही देखना चाहिए। इस संसार में रहकर जो हमें भाँति-भाँति का जीवन व्यतीत करना होता है, उस सबमें हमें अपने मन में किसी प्रकार की पाप की वृत्ति उत्पन्न नहीं होने देनी चाहिए और न ही आचरण द्वारा कोई पाप-कर्म करना चाहिए । हमें भावना रखनी चाहिए कि हम किसी ऐसे-वैसे संसार में नहीं रह रहे, हम तो प्रभु की यज्ञशाला में बैठे हैं। भला प्रभु की यज्ञशाला- जैसे पवित्र स्थान में बैठकर हम मन में पाप-संकल्प और आचरण में पाप-कर्म कैसे रख सकते हैं?

जो लोग भगवान् की इस इष्टि में बैठकर भी पाप करेंगे ही, जो पाप को छोडने को तैयार नहीं होंगे, उनपर भगवान् के व्रज गिरेंगे। उन्हें भाँति-भाँति से उनके पाप-कर्म के प्रतिफल के रूप में कष्ट-क्लेष प्राप्त होंगे । पाप का जीवन दु:ख पहुँचाए बिना नहीं रह सकता । पाप का फल दु:ख तो अवश्यम्भावी है।

दु:ख से बचने का एकमात्र उपाय पाप को छोड देना है और पाप से बचने का उपाय प्रकाश है- सत्यासत्य का विवेक करनेवाला ज्ञान है। हमसे जो पाप होते हैं, वे इसिलिए तो हो जाते हैं कि हमें किसी विशेष स्थिति को बनानेवाली सारी बातों का पूर्ण ज्ञान नहीं होता। अपने बाहर और अन्दर की किसी-न-किसी वस्तु के सम्बन्ध में ज्ञान की कमी से ही हमसे पाप हो जाता है। भगवान् की शरण में जाकर हमें उनसे इस ज्ञान-प्रकाश की याचना करनी चाहिए और भगवान् के गुणों का क्रियात्मक प्रयत्न करना चाहिए। जब प्रकाश-प्राप्ति की यह प्रार्थना और उसके ग्रहण करने का यह क्रियात्मक प्रयत्न मिल जाएँगे, तब वरणीय भगवान् की हमपर सचमुच कृपा हो जाएगी और फिर हमसे प्रकाश का कभी वियोग न होगा, इसलिए हमसे फिर कोई पाप भी न हो सकेगा। जब यह प्रकाश हमें पाप से बचा देगा, तब पाप के फलस्वरूप जो भाँति-भाँति के कष्ट-क्लेषरूप हिंसाएँ, अर्थात् ताडनाएँ हमें प्राप्त होती हैं, उनसे भी हमारे जीवन की रक्षा हो जाएगी। तब हमें वह जीवन प्राप्त होगा, जिसे वस्तुत: जीवन कहते हैं।

हे मेरे आत्मन्! वरणीय प्रभु की शरण में जाकर सदा उनसे ज्योति की, ज्ञान के प्रकाश की याचना किया कर। जब तुझमें ज्ञान की ज्योति जग जाएगी, तब सब कष्टों का मूल पाप तेरे पास न फटकेगा।

युवा चरित्र निर्माण एवं आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर सोल्लास सम्पन्न

वैदिक धर्म की रक्षा में अहर्निश सेवारत गुरुकुल आश्रम आमसेना के प्रांगण में ७ अक्टूबबर २०१४ को विजयादशमी के अवसर पर युवा चरित्र निर्माण एवं आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न हुआ।

इस शिविर का शुभारम्भ २ अक्टूबर को नुआपडा जिले के यशस्वी विधायक श्री वसंत भाई पण्डा के करकमलों से ओ३म् ध्वजोत्तोलन द्वारा हुआ। इस शिविर में छत्तीस गढ, ओडिशा से २०० आर्यवीरों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। शिविर में उन्हें आत्मरक्षा के उपायों के साथ - साथ चरित्र निर्माण का भी प्रशिक्षण दिया। शिविर का प्रशिक्षण सार्वदेशिक आर्यवीर दल के प्रचार मंत्री श्री चन्द्रदेव जी तथा आचार्य मुकेश जी ने दिया।

thearyasamaj.org

कर्त्तव्य - अकर्त्तव्य

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

प्रश्न-कर्तव्य क्या है, अकर्तव्य क्या है ?

उत्तर-एक उदाहरण पर सोचिये । राजभक्ति क्या है और राजद्रोह क्या है? राज्य का शासन जिन मूल तत्त्वों के आधीन है उनका सहयोग करना राजभक्ति और उनके विपरीत आचरण करना राजद्रोह है। राज्य कर्मचारियों को अनुचित रिश्वत देना राजद्रोह है क्योंकि यह उन मूल तत्त्वों के विपरीत है जिन पर शासन का मूल तत्त्व राजा के स्वेच्छाचरण की संतृप्ति पर आधारित नहीं है। कमजोर और स्वार्थी राजे कभी कभी असली राज्यभक्ति को राजद्रोह समझ लेते हैं परन्तु है यह समझ का फेर।

इसी उदाहरण को विश्व पर घटाइये। विश्व के शासन के कुछ मूल तत्त्व हैं। और उनका असली प्रयोजन है जीवों का हित। अत: मूल तत्त्वों के साथ सहयोग करना कर्तव्यता या शुभ कर्म है। और उनमें विघ्न डालने का विचार करना अकर्तव्यता या अशुभ कर्म है। इसी को पुरुषार्थी और अपुरुषार्थी कहेंगे। पुरुषार्थी का शाब्दिक अर्थ यह है 'पुरुष का अर्थ' अर्थात् 'जीवन का हित'। जीव का हित भी वह नहीं जो जीव चाहे। मनुष्य चाहता तो बुरा भी है और भला भी। हित है अन्तिम आध्यात्मिक उन्नति का विकास। अत: वह सिद्ध हुआ कि हमारा जो कर्म हमारे विश्व के आध्यात्मिक विकास में सहायक हो वही पुरुषार्थ है और जो बाधक हो वह अपुरुषार्थ। बच्चा रोग में अनिष्ट चीजें खाना चाहता है। उनको जुटाना न तो बच्चे का हित है न अर्थ। अत: जो बच्चे की इच्छा पूर्ति को ही उसका हित समझता है वह भूल करता है।

जीव और बुद्धि

प्रश्न - हमारी बुद्धि हम को सदा सन्मार्ग पर तो नहीं ले जाती।

उत्तर - इससे क्या? यह तो आपका काम है कि बुद्धि को किस प्रकार प्रयुक्त करें। केवल बुद्धि का प्रयोग मात्र आप की स्वतन्त्रता का द्योतक है।

प्रश्न - क्या ईश्वर ने किसी को अच्छे और किसी को बुरी बुद्धि देकर हम से विवेक की स्वतन्त्रता छीन नहीं ली? यदि हम को श्रेष्ठ बुद्धि मिलती तो हम कभी असन्मार्ग का अवलम्बन न कर सकते।

उत्तर - परमात्मा ने अकारण ही आपको बुरी बुद्धि नहीं दी। आपने अपने विवेक शून्य कर्मों से भी बुद्धि को भ्रष्ट कर दिया । जो तराजू आपको मिली है, यदि वह आपकी असावधानी से टूट जाय तो दोष किस का? फिर भी आपकी तराजू आपके हाथ में है । आप बुद्धि के प्रयोग करने के अधिकार से कभी वन्चित नहीं किये जाते। जब आपको मालूम हो जाय कि तराजू में बिगाड आ गया है तो आप उसे बना या सुधार सकते हैं। हर मनुष्य अपनी बुद्धि को ज्ञान, क्रिया तथा सावधानी से उत्तरोत्तर उत्कृष्ट बना सकता या बिगाड सकता है। शराब पीने से बुद्धि बिगडती और दूध आदि के उचित प्रयोग से बढती है। अत: बुद्धि के तारतम्य का दोष जगत् के नियन्ता पर लगाना दोष है।

प्रश्न - जब हमारी बुद्धियाँ भिन्न - भिन्न हैं तो कर्म भी भिन्न - भिन्न होंगे और फल भी भिन्न- भिन्न । फिर स्वतन्त्रता कैसी?

निर्वाचन के कई मार्ग -

उत्तर - यह ठीक है कि तीव्र बुद्धि वाला मनुष्य जो कर्म कर सकता है उसे मन्दबुद्धि नहीं कर सकता परन्तु मन्दबुद्धि वाले या तीव्र बुद्धि वाले मनुष्य के समक्ष निर्वाचन करने के लिये कई मार्ग खुले होते हैं या नहीं? यदि होते हैं तो स्वतन्त्रता सिद्ध है। एक चीटी भी जानती है कि उसके समक्ष कई मार्ग है । वह सोचती है और एक मार्ग पर चल देती है। इसी प्रकार पशु-पक्षियों का हाल हैं। आपके आँगन में आने वाले कौए या अन्य पक्षी भी सोचते और एक मार्ग को छोड कर दूसरे का अवलम्बन करते हुए प्रतीत होते हैं । अत: सिद्ध है कि वे कार्य करने में स्वतन्त्र हैं। आप किसी कुत्ते को अपने स्वामी के साथ सडक पर चलता हुआ देखें और निरीक्षण करें। आप को ज्ञात होगा कि कुत्ता निरन्तर सोच रहा है कि अब क्या करना चाहिये और क्या न करना चाहिये।

भाग्य प्रबल है या पुरुषार्थ

प्रश्न - भाग्य प्रधान है या पुरुषार्थ ?

उत्तर - पुरुषार्थ प्रधान है क्योंकि भाग्य भी तो पुरुषार्थ का ही फल है। जब तक कर्म न हो तब तक फल की प्राप्ति हो ही नहीं सकती।

कर्म प्रधान विश्व रचि राखा।
जो जस करहिं सो तस फल चाखा।।
पुरुषार्थ कर्म है, भाग्य फल।

प्रश्न - यह ठीक है, परन्तु प्रश्न यह है कि पुरुषार्थ क्या है और क्या पुरुषार्थ नहीं। हर एक कर्म जो मनुष्य करता है पुरुषार्थ नहीं है न पारिभाषिक अर्थ में कर्म ही है।

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिता:।

विश्व में एक भ्रान्ति-

बहुत से लोग कुकर्मों को भी पुरुषार्थ समझते हैं। एक परीक्षार्थी का उदाहरण लीजिये। किसी परीक्षा में उत्तीर्ण होना फल है जिसके पाने के लिए उसे यत्न करना है। उसका समस्त विहित विधान के अनुसार सावधानी से निरन्तर अध्ययन करना पुरुषार्थ है। अनिष्ट विधियों से परीक्षा भवन में नकल करना, परीक्षक को धमकी देना उस पर दबाव डालना या अन्य चालाकियाँ करना क्रियाएं (कर्म) तो हैं परन्तु उनको शुभ कर्म या पुरुषार्थ में नहीं गिन सकते। संसार में यह बडा भ्रम फैला हुआ है कि प्रत्येक चालाकी, मक्कारी और दगाबाजी को पुरुषार्थ समझकर लोग बुरे कर्मों में उलझे रहते हैं। उनका फल बुरा होता हैं। प्राय: चालाकी से की हुई दौड धूप को तदबीर या पुरुषार्थ समझ लिया जाता है। रिश्वत देना तदबीर, झूठ बोलना तदबीर, चालाकी चलना तदबीर। जो रिश्वत न दे या चालाकी न चले उसको कहेंगे कि ''यह सोता रहा, इसने तदबीर तो की ही नहीं। बिना पुरुषार्थ किये भी फल मिल सकता है क्या? '' इस प्रकार संसार में शुभ कर्म को पुरषार्थ नहीं समझा जाता। इसी कारण पाप में प्रवृत्ति बढती है और वह दु:खमूलक भी होती है। वस्तुत: कर्तव्य परायणता पुरुषार्थ है। अन्य सब अपुरुषार्थ या असली तदबीर का उल्टा मात्र।

योगदर्शन और कर्म

प्रश्न - योगदर्शन में कर्म के विषय में दो सूत्र दिये हैं-

सति मूले तद्विपाको जात्यायुर्भोगा:।
ते ह्लादपरितापफला: पुण्यापुण्यहेतुत्वात् ।।

कर्म का मूल रहने पर जब वह पकता है तो जाति या जन्म, आयु और भोग के रूप में आविर्भूत होता है । यह जन्म आयु और भोग, पुण्य और पाप की अपेक्षा से सुख और दु:ख रूपी फल वाले होते हैं।

यहाँ प्रश्न उठता है कि कर्म का फल सुख या दु:ख है या जन्म (जीवन) की इयत्ता और भोग । दूसरा प्रश्न है कि भोग सुख और दु:ख से इतर क्या वस्तु है? अथवा भोग का ही नाम सुख और दु:ख है ? तीसरा प्रश्न यह है कि यदि कर्म का फल सुख या दु:ख ही है तो 'जाति' और 'आयु' कहने की क्या आवश्यकता थी? चौथा प्रश्न यह है कि क्या जाति, आयु और भोगों के पिछले कर्मों के अनुसार नियत होने पर आगे को स्वतन्त्र कर्म करने का कोई अवसर रहता है या नहीं? क्या हमारा प्रत्येक कर्म केवल भोगों के भोगने का ही एक प्रकार मात्र है? इनको समझाइये।

thearyasamaj.org

अनुशासन का मंत्र ब्रह्मचर्य

विजयकुमारी

अनुशासन का सीधा-सादा अर्थ है- अपने को वश में रखना, नियम में रखना। अपने पर काबू पाने के लिए हमें मन, वचन और कर्म से हर समय, हर स्थान पर अपनी सब इन्द्रियों पर संयम करना चाहिए। इसी का नाम ब्रह्मचर्य है। आज के युग में ब्रह्मचर्य का पालन बहुत कठिन काम समझा जाता है। किन्तु बात ऐसी नहीं । अभ्यास से क्या नहीं हो सकता? ब्रह्मचर्य के भी कुछ विशेष नियम है । उनका अभ्यास करने से मनुष्य मृत्यू तक को जीत लेता है। मन और इन्द्रियों की तो बात ही क्या है।

स्वाद या जीभ पर संयम– जीभ हमारी मुख्य इन्द्रिय है इससे हम स्वाद लेते है। जिसने स्वाद पर अधिकार नहीं पाया वह अपनी दूसरी इन्द्रियों पर कभी अधिकार नहीं पा सकता। स्वाद के संयम का एक साधन यह है कि चटपटे पदार्थों, चाट-पकौडी, चटनी मसाले, अचार -मुरब्बे का व्यवहार आदत के रूप में नहीं करना चाहिए। इसके लिए सदा हमें यह सोचकर खाना चाहिए कि हम स्वाद के लिए नहीं अपितु शरीर-रक्षा के लिए भोजन करते है। ठीक जिस प्रकार हम अपनी प्यास बुझाने के लिए पानी पिते है, स्वाद के लिए नहीं, उसी प्रकार हमें केवल भूख मिटाने के लिए खाना चाहिए, स्वाद के लिए नहीं। इस प्रकार जो अपनी जीभ पर काबू रख रहा है समझो वह ब्रह्मचर्य का पालन करता है। भूख होतो सुखी-सडी भी मीठी लगती है। और बिना भूख के बर्फी भी फीकी होगी। अत: सच्चा स्वाद तो भूख में है न कि करारी वस्तुओं में। स्वाद को जीतने का दूसरा उपाय यह है कि हम निश्चित समय पर ही खाएं। निश्चित मात्रा खाएं। निश्चित प्रकार का ही भोजन खाएँ जिसमें स्वास्थ्य के लिए लाभदायक सब तत्त्व हो और जो संतुलित हो। जीभ को जीतने का तीसरा उपाय है- सदा अच्छी बातें बोलना।

आँख का संयम – भगवान ने आँख हमें देखने के लिए दी है। इसका मतलब यह नहीं कि हम जो चाहें, जितना चाहें देखें। आँख से केवल अच्छी वस्तुएँ ही देखनी चाहिए। कुछ समय पहले सूर्य ग्रहण लगा था। ग्रहण के समय सूर्य की ओर देखने से हानि होती है। किन्तु दो छात्रों को न जाने क्या सुझी कि उन्होंने शेखी में आकर नंगी आँखों से सूर्य की ओर देखने की ठान ली। लोगों ने उन्हे समझाया कि इससे पहले हानि होगी, किन्तु वे नमाने। अगले दिन लोगों ने बडे दु:ख के साथ समाचार-पत्रों में पढा कि सूर्य ग्रहण की ओर देखने के कारण वे दोनों छात्र अंधे हो गये।

(क) सिनेमा देखें या नहीं? : देखो अवश्य, किन्तु अच्छे चित्र देखो, जिनका प्रभाव तुम्हारे मन परबुरा न पडे। सिनेमा से मनोरंजन होत है। शिक्षा के माध्यम के रूप में भी चलचित्रों का बडा महत्व है। भूगोल और इतिहास की शिक्षा में चलचित्रों से जीवन आ जाता है। इतिहास के युद्ध देखो। राज्यक्रंतियों की झलक देखो । राष्ट्रों के उत्थान और पतन की कहानी आँखो के सामने पर्दे पर देखो। महापुरुषोंके चरित्र देखकर उनसे ऊँचा उठने की प्रेरणा लो। इसी प्रकार सफाई, स्वास्थ्य, संस्कृति, कला, उद्योग, योजना, नागरिकता आदि विषयों पर वृत्तचित्र को ढूंढ-ढूँढकर देखो। इस नाते चलचित्र विद्यार्थियों के लिए शिक्षक सिद्ध होते है।

किन्तु यह भी सच है कि आज घटिया स्तर के चलचित्रों की भरमार हो गई है। उनमें श्रृंगार का नग्न प्रदर्शन सामान्य सी बात हो गई है। प्रेम के नाम पर नंगे विलास का अभिनय किया जाता है, जिसके दर्शन से चरित्र पर उलटा प्रभाव पडता है। डकैती, जासूसी और हत्याकांडो के दृश्यों से छात्रों में गंडागदी को प्रोत्साहन मिल सकता है। सस प्रकार चित्रों में बाजारू और घटिया प्रेम तथा लूटपाट के चित्रों से नैतिकता का नाश होता है। आजकल तो कहानी लिखने के घटिया नुस्खे चल पडे है। नायक या नायिका का मिलना, छिप-छिपकर प्रेमलीला, नियम और मर्यादाओं को तोडकर विवाह आदि की योजनाएं, खलनायक या खलनायिका का प्रवेश, मार-काट,चीना-झपटी, अन्त या उपसंहार में प्यार की जीत । ऐसे चित्र छात्रों को कभी नहीं देखने चाहिए।

(ख) कहानियाँ– उपन्यास पढें या नहीं ?– विद्यार्थियों ! कहानियाँ पढों पर अच्छी। उपन्यास भी पढो पर अच्छे और खाली समय में पुस्तकालय से लेकर पढो। खरीद-खरीद कर पढो। पत्र-पत्रिकाओं में पढो। पढने की कोई मनाही नहीं। उलटा हम तो तुम्हे अच्छा साहित्य पढने की प्रेरणा देते हैं। यदि अब तक तुम नहीं पढते तो अब पढना आरम्भ कर दो।

विद्यार्थियो! जीभ और आँख पर संयम आरम्भ कर दो। धीरे-धीरे सब इन्द्रियों को वश में कर लो। इन्द्रियों को तभी वश में कर सकोगे जब अपने मन को वश में करना सीख लोगे। तभी तुम्हारा ब्रह्मचर्य पूर्ण कहलाएगा। उसके लिए कुछ मुख्य साधन निम्नलिखित हैं :

* श्रृंगार और फैशन से दूर रहना चाहिए। * भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए कि वह हमें बुराइयों से दूर रखे और अच्छे मार्ग की ओर ले चले। * अच्छे मित्रों और लोगों का संग करना चाहिए। * नियमित जीवन बिताना चाहिए। * सोने और जागने का समय निश्चित होना चाहिए। प्रात: ४ बजे के बाद कभी भूलकर भी नहीं सोना चाहिए। * परिश्रम और साहस के कार्य अवश्य करने चाहिए। * व्यायाम और खेलों में खुलकर भाग लेना चाहिए। * मन में अच्छे विचार रखने चाहिए। * अपनी त्रुटियों को जाँचने के लिए प्रतिदिन डायरी लिखनी चाहिए। * छिपकर काम करना अच्छा नहीं।

युवकों ! जो विद्यार्थी काल में ब्रह्मचारी रहता है वह अपने शरीर, मन और आत्मा का मालिक बन जाता है। इसी का नाम आत्मानुशासन है।

thearyasamaj.org

आर्य वीरांगना चरित्र निर्माण शिविर सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा मम्बई के तत्वावधान में आर्य समाज सान्ताक्रुज में २६ अक्टूबर से २ नवंबर २०१४ तक आर्य वीरांगनाओं का शिविर आर्य वीर दल मुम्बई द्वारा आयोजित किया गया। शिविर में शारीरिक पाठ्यक्रम का संचालन द्रोणस्थली तपोवन देहरादून से आई सुव्रती आर्या, श्रीमति वीणा चतुर्वेदी पाणिनी कन्या गुरुकुल वाराणसी एवं अंजलि गोस्वामी एवं सौरभ सिंह मुम्बई ने किया। आर्य समाज सान्ताक्रुज के महामन्त्री श्री संगीत शर्मा जो इस शिविर के शिविराध्यक्ष के सफल निर्देशन में मुम्बई आर्य वीर दल के संचालक पं. नरेन्द्र शास्त्री तथा मन्त्री पं. धर्मधर आर्य के नेतृत्व एवं श्री सतीश गोस्वामी व ज्ञानप्रकाश आर्य के अथक पुरुषार्थ से सम्पन्न हुआ। श्रीमति जयाबेन पटेल संचालिका - आर्य वीर दल मुम्बई, संयोजिका श्रीमति सुदक्षिणा शास्त्री, सरोज गुप्ता एवं सुनीता शास्त्री के नेतृत्व में महिलाओं की पूरी टीम ने शिविर में समस्त भोजनादि की व्यवस्था को सुधा रूप से पूर्ण किया। आर्य वीर दल के बौद्धिकाध्यक्ष ब्र. अरुणकुमार ''आर्यवीर'' ने शिविर में बौद्धिक प्रशिक्षक के रूप में सेवाएं दीं।

शिविर में लगभग ४० कन्याओं ने भाग लिया इन वीरांगनाओं को कनिष्ठ एवं वरिष्ठ वर्गों में विभाजित किया गया जिसमें घाटकोपर, सायन, कुर्ला, बोरीवली, खार, मलाड, मुलुण्ड, डोम्बिवली, ठाणे आदि मुम्बई के विभिन्न स्थानों से शिविरार्थियों ने भाग लिया वहीं भिवंडी, वसई, सानपाडा आदि की आर्य वीरांगनाएं भी थीं।

प्रात: ५ बजे से रात्रि १० बजे तक चलनेवाली अतिव्यस्त दिनचर्या में इन वीरांगनाओं को आसन- प्राणायाम, कुंग- फू-कराटे, सर्वांगसुन्दर व्यायाम, सूर्यनमस्कार आदि के व्यायाम तथा विभिन्न खेल खिलाए गये। ईश्वर- जीव- प्रकृति, वेद, सृष्टि रचना, पंचमहायज्ञ , १६ संस्कार, वैदिक वर्णाश्रम व्यवस्था की जानकारी सरल ढंग से दी। बौद्धिक कक्षाओं में स्थानीय विद्वानों श्रीमति जयाबेन, डा. निकेश, श्रीमति निर्मला पारधी, श्री योगेश शास्त्री, श्री सन्दीप आर्य, श्रीमति रमा आर्या एवं डॉ. तारा सिंह ने चरित्र निर्माण, व्यक्तित्व विकास, तनाव मुक्ति, योग व व्यवहारिक जीवन में सफलता स्वस्थता आदि विषयों पर भी प्रकाश डाला। रात्रि मनोरंजन की कक्षा में महापुरुषों के चलचित्र एवं अन्य उपयोगी चलचित्र दिखाए गए। इन सभी विषयों की बौद्धिक परीक्षा ली गई जिनमें वरिष्ठ वर्ग में कु. डिम्पल पोकार ने प्रथम, कु. संस्कृति द्वितीय, कु. विराली एवं ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। २ नवम्बर को प्रात: यज्ञ के अवसर पर इस में से लगभग ३० वीरांगनोओं को यज्ञोपवीत दिया। इस अवसर पर नियमित ईश्वरोपासना, स्वाध्याय, अग्निहोत्र आत्मनिरिक्षणादि करने का वीरांगनाओं ने व्रत लिया। समापन समारोह २ नवंबर को प्रात: १०बजे शिक्षिकाओं द्वारा मन्त्र पाठ से प्रारम्भ हुआ. पं. धर्मधर आर्य ने देशभक्ति का जोशीला गीत वीरांगनाओं से गवाया तत् पश्चात् दल के संचालक आचार्य नरेन्द्र शास्त्री ने आर्य वीर दल का संक्षिप्त परिचय दिया। प्रशिक्षित आर्य वीरांगनाओं के भजन, भाषण, संवादों एवं अनुभवों को सुनकर दर्शक वृन्द भावविभोर हो गये, शारीरिक प्रदर्शन, सर्वांगसुन्दर व्यायाम, सूर्य नमस्कार, कराटे, आसनों के स्तूप एवं वैदिक गणित आदि को देखकर श्रोतागण मन्त्रमुग्ध थे।

श्री रमेश सिंह मन्त्री आर्य समाज सान्ताक्रुज ने कहा कि हमें नींव की ईट की तरह समाज को मजबूत आधार प्रदान करना चाहिए। दल के पूर्व कोषाध्यक्ष श्री हीरालाल मकवाणा ने सभी आर्य वीरांगनाओं के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। कर्मठ समाजसेविका व आर्य समाज सान्ताक्रुज की ट्रस्टी श्रीमति शिवराजवती आर्या ने महर्षि दयानन्द का सपना साकार करने की प्रेरणा आर्य वीरागनाओं को दी। आ.प्र.नि. सभा मुम्बई के महामन्त्री श्री अरुण अब्रोल ने सभी आर्य समाजों की सहभागिता को सराहनीय कदम बताया। आर्य विद्या मन्दिर मुम्बई के ट्रस्टी श्री राजकुमार सहगल ने कहा कन्याओं के इस प्रकार की शिक्षा आत्म सुरक्षा के बहुत आवश्यक है। आर्य वीर दल के अधिष्ठाता श्री ओमप्रकाश शुक्ला ने वीरांगनाओं उनके अभिभावकों एवं आयोजकों को विशेष सन्देश दिया।

इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि आदरणीय श्रीमती अल्का केरकर उपमहापौर ने इस प्रकार के शिविर प्रतिवर्ष करने का आग्रह किया, जिससे नवयुवक- युवतियों को वैदिक संस्कृति-सभ्यता से अवगत कराया जा सके।

आर्य पुरोहित मुम्बई सभा के कोषाध्यक्ष नी विनोद कुमार शास्त्री एवं प्रधान पं. नामदेव विद्यावाचस्पति ने सम्पूर्ण कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की और भविष्य में इस प्रकार के आयोजन होते रहने चाहिए।

सम्पूर्ण कार्यक्रम का संयोजन पं. धर्मधर आर्य सिद्धान्ताचार्य महामन्त्री - आर्य वीर दल मुम्बई ने सभी समाजों के अधिकारियों के विशेष सहयोग के लिए धन्यवाद ज्ञापन किया। अन्त में ध्वजावतरण तथा शिक्षकाओं द्वारा शान्ति पाठ के साथ शिविराध्यक्ष ने शिविर समाप्ति की घोषणा की। तत्पश्चात सभी ने ऋषि लंगर में भाग लिया।

भूल सुधार

गतांक में ''जीवन बन्धनों से मुक्ति'' नामक लेख डा. बलदेव सहाय की पुस्तक माण्डूक्योपनिषद से साभार प्रकाशित हुआ था। जिसके कुछ अंश अवैदिक हैं। यह लेख गलती से छप गया जिसका हमें अत्यन्त खेद है। कृपया पाठकगण इसे अन्यथा न समझें।

सूर्य नमस्कार

डॉ. राजीव रस्तोगी
डॉ. संजीव रस्तोगी

स्थिति - १

ॐ मित्राय नमः ।

मेदयति स्नेहयति इति मित्रः ।

अर्थात् पोषण और स्नेह करनेवाला ही मित्र होता है ।

यह सूर्य की मित्रवत् (परोपकारी) प्रकृति के लिए उसकी स्तुति में उच्चारित किया जानेवाला मंत्र है । यह सर्वविदित है कि पृथ्वी पर जीवन सूर्य के कारण ही संभव है; क्योंकि सूर्य पेड - पौंधो को आवश्यक ऊर्जा प्रदान करता है और इसी सूर्य के माध्यम से प्रकाश - संश्लेषण की क्रिया द्वारा भोजन तैयार करते हैं । इस मंत्र के द्वारा हम सूर्य की तरह ही सबके प्रति मित्रभाव विकसित कर सकते हैं ।

स्थिति - २

ॐ सूर्याय नमः ।

सुवति कर्मणि लोकं प्रेरयति वा ।

अर्थात् जो संपूर्ण विश्व को कार्य के लिए उद्यत (तैयार) करता है, वही सूर्य है ।

सूर्य दिन के आरंभ का सूचक है और इस प्रकार वह स्वाभाविक रूप से लोगों को उन कार्यों में लग जाने की प्रेरणा देता है, जो जीवन के अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं । इस मंत्र से सूर्य की प्रेरक प्रकृति के लिए उसकी स्तुति की जाती है । अत: इसके नियमित उच्चारण से हम अपने आस-पास के लोगों के लिए विभिन्न प्रकार के कार्यों के लिए प्रेरक बन सकते हैं ।

स्थिति - ३

ॐ रवये नमः ।

रूयते स्तुयते इति रविः ।

अर्थात् जिसके अनगिनत हित कर्मों के लिए हम उसकी स्तुति करते हैं, वही सूर्य है ।

इस मंत्र से सूर्य को सर्वहितकारी प्रकृति केलिए उसकी स्तुति की जाती है । इस मंत्र के द्वारा हम सूर्य के गुणों को ग्रहण करके उसके जैसा सम्मानित स्थान प्राप्त कर सकते हैं ।

स्थिति - ४

ॐ भानवे नमः ।

भाति चतुर्दश भुवनेषु स्व प्रभय दीप्तए इति भानुः ।

अर्थात् जो अपनी प्रभा पूरे संसार को प्रकाशित करता है, वही भानु (सूर्य) है।

इस मंत्र से सूर्य की स्वयं प्रकाशित होकर दुनिया को प्रकाशमान करने की प्रकृति के लिए उसकी स्तुति की गई है । यह गुण मनुष्य के लिए भी एक महान् गुण है । इस मंत्र के द्वारा हम स्वयं प्रकाशित होकर (अर्थात् गुण-ज्ञान से संपन्न होकर) अपने आस-पास के लोगों को भी प्रकाशित कर सकते है ।

स्थिति - ५

ॐ खगाय नमः ।

खे नभसि गच्छति इति खगः ।

अर्थात् अकाश में जिसका मार्ग है, वही खग है ।

इस मंत्र से खग (आकाश में विचरण करनेवाला) की स्तुति की गई है । सूर्य के कारण ही दिन और रात होते हैं। साथ ही सूर्य शाश्वत है । इस मंत्र के द्वारा हम सूर्य की तरह स्थिर रहने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं ।

स्थिति - ६

ॐ पूष्णे नमः ।

पुष वृद्धो ।

अर्थात्‌वह, जो बल में वृद्धि करता है, पुष्ण कहलाता है ।

सूर्य पूरी दुनिया को पोषण प्रदान करने में सहायक है । इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह स्वयं जीवन को पोषण करता है । इस मंत्र के द्वारा स्तुति करने से हमारे भीतर ऊर्जा का संचार होता है, जिससे जीवन को बल और सकारात्मक वातावरण मिलता है । यह बल और सकारात्मक वातावरण जीवन की बनाए रखने के लिए आवश्यक है ।

स्थिति - ७

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः ।

हिरण्यं हेममयन्दं गर्भ उत्पत्ति स्थानं अस्य ।

अर्थात् जिसका मध्य स्थान सोने की तरह चमकीला है और जो सभी की उत्पत्ति का कारण है, वह हिरण्यगर्भ हैं ।

हिरण्यगर्भ होने का भाव है - सोने की तरह चमकदार और सूर्य की तरह उत्पत्तिकारक (उत्पादक) बनें ।

स्थिति - ८

ॐ मरीचये नमः ।

मृयन्ते नाशयन्ति क्षुद्र जन्तवा तमांसि वा ।

अर्थात् जिसकी उपस्थिति मात्र से अंधकार से उत्पन्न होनेवाली स्थिति का नाश हो जाता है, वह मरीच है ।

सूर्य की तरह प्रकाशमान बनें, जिससे मन का और आस-पास में उपस्थित अँधेरा नष्ट हो जाए । यहाँ जिस अंधकार की बात की जा रही है, वह मात्र रात्रि का अंधकार नहीं है, बल्कि उसमें मन का अंधकार तथा अंधकार से उत्पन्न होनेवाली विभिन्न स्थितियाँ भी शामिल हैं । विभिन्न रोगकारकों की उत्पत्ति और विकास के लिए कम तापमान और अंधकार की आवश्यकता होती है । सूर्य की पराबँगनी किरणों से इस प्रकार के रोगकारकों का नाश हो जाता है । इस मंत्र के द्वारा स्तुति करने से मन के अंधकार को दूर करने की शक्ति मिलती है ।

स्थिति - ९

ॐ आदित्याय नमः ।

अदिति अपत्यं आदित्याय इति ।

अर्थात् जिसकी उत्पत्ति अदिति से हुई है, वही आदित्य है ।

इस मंत्र के द्वारा आदित्य की स्तुति की गई है ।

स्थिति - १०

ॐ सवित्रे नमः ।

सर्वलोका प्रसवनत सविता इति प्रकृतिते ।

अर्थात् संपूर्ण विश्व को जन्म देनेवाला ही सविता है ।

इस मंत्र में सूर्य द्वारा स्वयं पीडा सहकर दूसरों को जीवन देने के गुण हेतु उसकी स्तुति की गई हैं । यह एक सर्वविदित तथ्य है कि सूर्य अनादि काल से परमाणु संलयन की प्रक्रिया के माध्यम से प्रकाश और ऊर्जा प्रदान करता आ रहा है । और यह प्रक्रिया लगातार जारी है । सूर्य अपना वजन या प्रभाव खोता जा रहा है ।

स्थिति - ११

ॐ अर्काय नमः ।

अर्थात् अपने गुणों के लिए पूजा जाता है, वह अर्क है ।

इस मंत्र के द्वारा सूर्य के गुणों को प्राप्त करने के लिए सूर्य का आवाहन किया गया है ।

स्थिति - १२

ॐ भास्कराय नमः ।

भासं करोति इति भास्करः ।

अर्थात् जो संपूर्ण विश्व को प्रकाशित करता है, वही भास्कर है ।

इस मंत्र के द्वारा सूर्य की तरह प्रकाशमान होकर दूसरों को प्रकाशित करने का गुण प्राप्त करने के लिए सूर्य की स्तुति की गई है।

thearyasamaj.org

thearyasamaj.org

नूतन निष्काम पत्रिका वर्ष-५ अंक-१२ मुम्बई दिसम्बर - २०१४ पृष्ठ-१६ मूल्य- रु. ९/-

पौष २०७१ (दिसम्बर २०१४) Post Date : 25-12-2014 MH/MR/N/136/MBI/-13-15 MAHRIL 06007/31/12/2015-TC पोष्ट आफिस : सांताक्रुज़ (प.)

आर्य समाज सान्ताक्रुज मुम्बई का मुखपत्र

संपादक : संगीत आर्य

मुद्रक एवं प्रकाशक : चन्द्रपाल गुप्त द्वारा कृष्ण प्रिंटींग प्रेस, २६, मंगलदास रोड, मुंबई-२. से मुद्रित कराकर आर्य समाज भवन, वी. पी. रोड, (लिंकिंग रोड़), सान्ताक्रुज़ (प.) मुंबई-४०० ०५४. से प्रकाशित किया। दूरभाष : २६६० २८००/२६६०२०७५

प्रति,

टिकट

" बोध - प्रतिबोध "

शिव शोध बोध प्रतिपल जागो ।
जागो रे व्रत धारक जागो ।।

जब जाग गये तो सोना क्या ।
बैठे रहने से होना क्या ।
कर्तव्य पन्थ पर बढ जाओ,
तो दुर्लभ चाँदी - सोना क्या ।
मत तिमिर ताकु श्रुति पथ त्यागो ।
जागो रे व्रत धारक जागो ।।१।।

बन्द नयन के स्वप्न अधूरे ।
खुले नयन के होते पूरे ।
यही स्वप्न संकल्प जगायें
करें ध्येय के सिद्ध कंगूरे ।
संकल्प बोध उठ अनुरागों ।
जागो रे व्रत धारक जागो ।।२।।

शिव निशा जहाँ मुस्काती है ।
जागरण ज्योति जग जाती है ।
संकल्प हीन सो जाते है ।
धावक को राह दिखाती है ।
श्रुति दिशा छोडकर मत भागो ।
जागो रे व्रतधारक जागो ।।३।।

बोध मोद का लगता फेरा ।
मिटता पाखण्डों का घेरा ।
शिक्षा और सुरक्षा सधती,
हटता आडम्बर का डेरा ।
बोध - गोद प्रिय प्रभु से माँगो ।
जागो रे व्रत धारक जागो ।।४।।

कुल फूल मूल शिव सौगन्धी ।
शंकरा-कर्षण सुत सम्बन्धी ।
रक्षा, संचेत अमरता से,
हो जन्म उन्हीं के यशगन्धी ।
योग क्षेम के क्षितिज छलांगी ।
जागो रे व्रतधारक जागो ।।५।।

- देवनारायण भारद्वाज

उत्साह का चमत्कार

एक महिला कैंसर से बुरी तरह पीडित थी। डॉक्टरों ने उसे बता दिया कि उसके पास जीवन के छह महीने शेष है। इस दौरान उसे महंगा इलाज कराना होगा। महिला के पास इलाज के लिए पैसे नहीं थें। जीवन के मात्र छह महीने बाकी देखकर उसने तय किया कि वह एक-एक क्षण का सदुपयोग करेगी। उसने गरीबों और निराश्रितों की सेवा शुरु कर दी। वह सारा दिन गरीब बच्चों के चेहरों पर खुशियां लाने का प्रयास करती। उनके साथ हंसती-खेलती। उत्साह में उसके दिन तेजी से बीत रहे थे। एक दिन महिला ने कैंसर पडितों की सेवा हेतु देशवासियों से आर्थिक सहायता की अपील की। उसने जन-जन तक कैंसर पीडितों की हालत बयां करने के लिए समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, राडियो, टेलीविजन आदि का सहारा लिया। लोगों ने तुरंत पैसा देना शुरु भी कर दिया। दो-तीन महीने में ही इतना धन एकत्र हो गया कि उनसे एडवांस तकनीक की तीन-चार मशीनें आ गई और एक कैंसर अस्पताल का निर्माण भी होने लगा। अपनी सफलता देखकर महिला का उत्साह चरम पर था। महिला इन कार्यों में इतनी व्यस्त रही कि उसे इस बात का भान ही न रहा कि वह खुद कैंसर पीडित है। एक साल बाद उसे ध्यान आया कि डॉक्टरों ने तो उसके जीवन के छह माह ही बाकी बताए थे। लेकिन अब वह पहले से अधिक स्वस्थ महसूस कर रही थी। जांच में पाया गया कि उसका कैंसर गायब था। यह देख डॉक्टर दंग रह गए। महिला मुस्करा कर बोली, 'यह कैंसर उत्साह और सेवा भावना से डर कर भाग गया है, सभी उसकी बात से सहमत थे।

संकलन : **रेनू सैनी**